www.thearyasamaj.org

Annual Subscription Rs. 100/- ओ३म् 27th December 2013

# आर्य जीवन
ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక


## डर्बन दक्षिण अफ्रिका का
# आर्य महासम्मेलन
## सफलता पूर्वक सम्पन्न

दक्षिण अफ्रिका भारत से सुदूर लगभग ७००० किलोमीटर दूरी पर स्थित देश, जो बहुत सालों तक अंग्रेज़ों की कॉलोनी रही। लगभग १५०-२०० वर्ष पहले भारत के ब्रिटिश शासक अपने स्वार्थ के लिए तथा राज्य विकास तथा अपनी ताकत को मज़बूती प्रदान करने के लिए भारत से विशेषकर पूर्वी उत्तर प्रदेश व बिहारी लोगों को मजदूर बनाकर दक्षिण अफ्रीका ले गये। भारत के मजदूर भैया वहाँ जाकर वहीं के निवासी बन गए। अब लगभग पाँचवी-छठी पीढ़ी से भारतीय हिन्दु वहाँ बस रहे हैं। शुरू से ही गुजराती लोग जो व्यापार में रुचि रखते थे, भी व्यापारार्थ दक्षिण अफ्रिका चले गए। बहुत सारे लोग भोजपुरिया भाषा बोलने वाले हैं। पर नई पीढ़ी के लोग भोजपुरिया जानते ही नहीं। उन्हें हिन्दी भी टूटी-फूटी आती है। नौजवान पीढ़ी में हिन्दी कम जानते हैं। लगभग सभी लोग अंग्रेज़ी बोलते हैं। मातृभाषा अंग्रेज़ी हो गई है। सामान्य मजदूरी करनेवाले से लेकर पढ़े-लिखे सभी लोग अंग्रेज़ी ही बोलते हैं और सारा कामकाज अंग्रेज़ी में ही करते हैं।

आरम्भ के दिनों में जब भारतीय मजदूर बनकर गए, तो लगभग सभी के सभी कालों के साथ गुलामों की तरह ही रहे। उन्होंने बहुत कष्ट झेले हैं। इसमें कोई संदेह नहीं। सभी भारतीयों को अपनी परम्पराओं को बनाए रखने का, सबको एक बनाए रखने के लिए आर्य समाजी प्रचारकों ने बहुत काम किया। परिणाम स्वरूप २०० वर्षों के अंतराल में भी अपनी वैदिक परम्पराओं को बनाए रखने में भारतीय मूल के लोग सफल रहे हैं। पर आधुनिक दुनिया ने उनके सामने बार-बार सवाल खड़े किये हैं। विकास के नाम पर जो चीजें आ रही हैं, वह भारत में ही परम्पराओं को तोड़ रही हो, तो वहाँ और भी परिस्थितियाँ क्लिष्ट हो जाती है। परम्पराएँ टूट रही हैं और हिन्दु समस्याओं से जूझ रहे हैं। अनेकों सम्प्रदायों ने तरह-तरह के मंदिर खड़े कर लिये हैं पर हिंदुओं की एकता व भारतीय सांस्कृतिक परिवेश को बचा पाने में लगभग विफल रहे हैं। जो कुछ चल रहा है, उसे मज़बूती प्रदान करने के लिए आर्य समाजी ज्यादा चिंतित हैं।

वर्ल्ड वैदिक कॉन्फरेंस के नाम से दक्षिण अफ्रिका की आर्य प्रतिनिधि सभा ने आर्य महासम्मेलन २८ नवम्बर से लेकर १ दिसंवर २०१३ तक सफलता पूर्वक सम्पन्न किया। अफ्रिका से संबंधित लगभग सभी देशो से आर्य समाजों के प्रतिनिधियों ने सम्मेलन मे भाग लिया। इसके अतिरिक्त सुरिनाम, गुयाना, कनाडा, अमेरिका, न्यूजीलैंड तथा भारी संख्या में मॉरिशस से आर्य समाजी प्रतिनिधियों ने सम्मेलन में हिस्सा लिया। जैसे सबको विदित है, कि भारत की प्रतिनिधि सभाएँ और विशेषकर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा विभाजित है और इसी की वजह से आर्य समाज की शिरोमणि सभा गुटों में बंटी हुई है, जिसकी एकता को लेकर कई प्रयास होने के बावजूद भी कुछ लोगों की हठवादिता के कारण तथा अपने आपको ही परिपूर्ण मानने के कारण आज तक भी आर्य समाज में या सभाओं में एकता नहीं हो पायी है। इस स्थिति को भाँपकर सुदूर सात हज़ार किलोमीटर दूर रहने वाले दक्षिण अफ्रिका के अधिकारियों ने एक उत्तम निर्णय लिया कि वे तटस्थ रहेंगे और दक्षिण अफ्रिका की आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से ही इस

# जिज्ञासा समाधान

*- आचार्य सोमदेव*

जिज्ञासा - आज अभिवादनवाचक शब्द बहुत चल रहे हैं। उनमें नमस्ते और नमस्कार भी है। अभिवादन करते समय कौन-सा शब्द या वाक्य बोले? कृपया बतावें। नमस्कार और नमस्ते में से अभिवादन के लिए कौन-सा ठीक है, इसका अर्थ क्या है, बताने की कृपा करें। अमोल आर्य, गाँव-असोला, जि. वाशीम (महाराष्ट्र)।

समाधान- हम समाज में रहने वाले हैं, समाज में रहते हुए परस्पर एक-दूसरे से व्यवहार करना पड़ता है, करना होता है। हमारा व्यवहार, शिष्टाचार पूर्वक हो इसके लिए हम परस्पर एक-दूसरे से मिलते समय दूसरे के सम्मान के लिए अभिवादन करते हैं। अभिवादन करते समय हम वाणी से बोलते हैं। अभिवादन करते हुए वाणी से क्या बोलें और शरीर से किस प्रकार की क्रिया (संकेत) करें, यह विचारणीय है। आज वर्तमान में अभिवादनसूचक शब्द बहुत सारे बोले जाते हैं, जैसे राम-राम, जय रामजी की, राधे-राधे, जय श्रीकृष्ण, जय मतादी, जय भीम, सत् श्री अकाल, अस्सलाम वालेकुम, गुड मॉर्निंग, ओम्‌जी, नमस्कार, नमस्ते और अपने-अपने मतवाले अपने गुरू आदि का नाम लेते हैं। इन सब में अभिवादन के लिए कौनसा ठीक-ठीक सार्वभौमिक, सबके लिए हो, यह विचार कर देखें, तो पता चलता है कि 'नमस्ते' ही एकमात्र है, जिसके बोलने से एक-दूसरे का सम्मान होता है। नमस्ते के अतिरिक्त राम-राम, ओम्‌जी आदि शब्दों से एक-दूसरे का सम्मान नहीं होता है। ये अभिवादन करते समय सम्मान सूचक शब्द नहीं है। ये किसी वर्ग विशेष के हो सकते हैं, जिनको कि उन वर्ग विशेष वालों ने अपने अज्ञान से अभिवादन के लिए उनको अपना लिया है।

राम-राम आदि को तो मान लेवें कि अभिवादनसूचक शब्द नहीं है, किसी वर्ग विशेष के हैं। किन्तु नमस्कार तो ऐसा नहीं है, इसको स्वीकार क्यों नहीं करते? इसका उत्तर है कि जो भाव और अर्थ नमस्ते में हैं, वह नमस्कार में भी नहीं है। 'नमस्कार' एक पद है, संज्ञा है और 'नमस्ते' एक वाक्य है, नमस्कार में दो शब्द नमः और कार है, ये दोनों मिलकर एक पद बना, जिसका अर्थ है नमन करना, झुकना, अभिवादन करना आदि। जब किसी को नमस्कारजी कहते हैं, तो अर्थ निकलता है - नमन करना जी, झुकना जी आदि। नमस्कार कहने से झुकना, नम करना, सामने वाले को है या स्वयं को है यह पता ही नहीं चलता। किन्तु नमस्ते में ऐसा नहीं है। उसमें तो ठीक-ठीक पता चलता है कि मैं सामने वाले को नमन कर रहा हूँ। नमस्ते में नमः ऋते, नमः, नमन, ते, तुम्हारे (आपके) लिये अर्थात् मेरा तुम्हारे (आपके) लिए नमन होवे, मैं आपका मान्य, सम्मान करता हूँ, आदर करता हूँ। आदि भाव नमस्ते में ही है। अन्य अभिवादनसूचक शब्दों में नहीं।

आगे नमस्ते के विषय में 'सत्यार्थ भास्कर' से उद्धृत करते हैं- परस्पर अभिवादन के लिए नमस्ते करना ही शास्त्र सम्मत है। वेद, ब्राह्मण, उपनिषद, रामायण, महाभारत तथा पुराणादि ग्रंथों में सर्वत्र इसी का विदान किया है। अन्य जितने भी पद वर्तमान में प्रतचलित हैं, वे सब अशास्त्रीय एवं कपोल कल्पित हैं। हमरे पूर्व पुरुष सदा से 'नमस्ते' का ही प्रयोग करते आये हैं। अपने कतन की पुष्टी में यहाँ कतिपय प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

यजुर्वेद के सोलहवें अध्याय के प्रथम मंत्र में

**नमस्ते रुद्र मन्यवउतो त इषवे नमः।**
**बाहुभ्यामुत ते नमः।।**

- यजु. १६.१

नमस्ते वेदों में अनेकत्र है - ऋग्वेद - ८.७५, १०, अ. ६.१३.२, १२.४.४५, १३.४.४८, १.१३.१, यजु. १६.२१, अ. ११.२.२५, ११.२.३१, १०.१०.१, १.१३.२, ११.४.८, ६.१३.३, १.१०.२, यजु. १६.१, अ. ६.९०.३, यजु. १७.११, ३६.२० आदि.

यजुर्वेद के १६ वें अध्याय के ३०, ३२ मंत्रों के अन्वयार्थ से स्पष्ट है कि यहाँ छोटे-वडे, बरावर वाले सवके लिए नमस्ते से अभिवादन का निर्देश किया है। कठोपनिषद् में गुरुवर यमाचार्य नचिकेता को कहते हैं- **'नमस्ते ब्रह्मन्।। स्वस्तिनेस्तु'** १.९.।

ब्रह्मवादिनी गार्गी महर्षि याज्ञवल्क्य का अभिवादन करती है - **' सा होवाच, नमस्ते याज्ञवल्क्याय।'** शत. १४.६.८.५।

राजर्षि विश्वामित्र ने ब्रह्मर्षि वशिष्ट से उनके आश्रम से विदा होते कहा - **'नमस्तेस्तु गमिशामि मैत्रेणेक्षस्व चक्षुषा।'**

-वा. रा. बा. ५२.१७ ।

शकुनी मामा अपने भांजे युधिष्ठिर से - **'जेष्ठो राजन् वशिष्टो सि नमस्ते भरतर्षभ.'**

श्रीकृष्ण धृतराष्ट्र से - **'नमस्ते पुण्डरिकाक्ष पुनः पुनरदम्'**

कौशल्या अपने पुत्र राम से - **'देव देव नमस्ते स्तु'**

हिमवानजी अपनी पुत्री पार्वती से - **'नमस्तेस्तु महादेवी, नमस्तेतु परमेश्वरी।'**

-कुर्म पु. १२.२३६।

नमस्ते के उत्तर में नमस्ते - राम उवाच - **'नमस्ते देवदेवेश भक्तानाम भयंकर।'** उत्तर में महादेव- **'श्वेतं द्वीपं स्वकं स्थानं वृज देवो नमोस्तुते।**

(नमः + ते = नमोस्तेस्तु)।'

पद्यम् पु.। सावित्री- 'देव। नमोस्तुते।'

ब्रह्माजी 'पादयोः पतितस्तेह---- नमोस्तुते' श्वसुर दक्ष अपने जामाता महादेवजी से - 'नमो दिक्चर्मवस्त्राय नमस्ते तीव्र तेजसे।' प. पु. सृ. खं. ५।८०

ब्रह्माजी की भूल से उनकी पत्नी रुष्ट हो गई। रुष्ट सावित्री को मनाने के लिए उन्होंने विष्णु और लक्ष्मी को भेजा। ब्रह्माजी की आज्ञा से वे दोनों सावित्री को मनाने गये। सावित्री ने जब उन दोनों को आते देखा, तो जल्दी से खड़ी हो गई - **'उत्तंस्थौ सत्वरा भुत्वा।'** तब विष्णुजी बोले- **'नमस्ते देव देवैशि ब्रह्मपत्नी नमोस्तुतो।'**

विष्णुजी आयु में सावित्री से बड़े और रिश्ते में श्वसुर थे और प्रभावशाली थे। इसलिए सावित्री को मना लाने का काम ब्रह्माजी ने उन्हें और लक्ष्मी को सौंपा था। परंतु वहाँ जाकर वे बातों में लग गए। देरी होती देख ब्रह्माजी ने पार्वती और शंकरजी को भेजा। शंकर ने वहाँ जाते ही सावित्री को नमस्ते किया - **'दुरादेव तु रुद्रेण ब्रह्माणि चाभिवादिता, देवी नमोस्तुते।'** फिर शंकरजी ने पार्वती की ओर संकेत करते हुए कहा- **'एषा गौरी समायाता भ्रातृभार्या तवानघा।'** तुम्हारी भाभी भी मेरे साथ तुम्हें मनाकर ले जाने को आयी है - प.पु.।

सावित्री और गायत्री दोनों ब्रह्माजी की पत्नियाँ थी। सावित्री को शंकरजी बहन कहते हैं, तो गायत्री (बहन की सपत्नी होने के नाते) भी उनकी बहन हुई। पहले भाई ने बहन को नमस्ते की थी, तो अब दोनों बहनें (गायत्री व सावित्री) भाई शंकरजी का अभिवादन करते हुए कहती है - **'नमस्ते गिरीजानाथ।' हे पार्वतीपते । नमस्ते ।** -

- स्कंद पुराण ब्र. खं. से. मा. ४०.३१।

यह सारी कथा काल्पनिक है। यहाँ इसे उधृत

www.thearyasamaj.org



# 'भारत माता के वीर आदर्श सपूत शहीद रामप्रसाद बिस्मिल'

-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

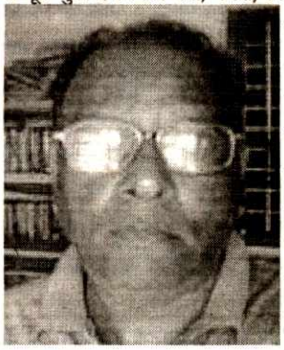

आज की युवापीढ़ी आधुनिक युग के निर्माता देशभक्तों को भूल चुकी है जिनकी दया, कश्पा, त्याग व बलिदान के कारण आज हम स्वतन्त्र वातावरण में सम्मानजनक जीवन व्यतीत कर रहे हैं। हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि आज की युवा पीढ़ी प्रायः धर्म, जाति व देश के प्रति अपने कर्तव्यों के प्रति सजग नहीं है वा विमुख है। यह एक आश्चर्य है कि हमें देश-विदेश के क्रिकेट आदि खिलाड़ियों, फिल्मी अभिनेताओं, बड़े-बड़े घोटाले व भ्रष्टाचार करने वाले राजनीतिज्ञों के नाम व कार्यों के बारे में तो ज्ञान है परन्तु जिन लोगों ने देशवासियों को अपमानित जीवन जीने से बचाया है, उन्हें हम भूल चुके हैं। इसे देशवासियों की उन हुतात्मा बलिदानियों के प्रति कश्तघ्नता ही कह सकते हैं। ऐसा क्यों हुआ? इसका सरल उत्तर है कि स्वतन्त्रता के बाद देश में जो वातावरण बना और देश भक्ति को शिक्षा पद्धति में अनिवार्य विषयों में सम्मिलित नहीं किया, उसके कारण ही ऐसा हुआ है। आज की युवा पीढ़ी ने स्वदेशी सभी अच्छी चीजों को छोड़ दिया है और पाश्चात्य बुरी चीजों को अविवेकपूर्ण ढंग से अपनाया है व अपनाती जा रही है। ऐसे वातावरण में शहीदों के जन्म व बलिदान दिवस हमें अवसर देते हैं कि हम तत्कालीन परिस्थितियों में उनके द्वारा किए गये कार्यों पर दश्ष्टिपात कर उनका मूल्यांकन करें व उनसे शिक्षा ग्रहण कर अपना कर्तव्य निर्धारित करें। भारत माता को विदेशी आक्रान्ताओं से, जो देशवासियों को पल-प्रतिपल अपमानित करते थे, हमारा प्राचीन धर्म व संस्कश्ति जिनके शासन में असुरक्षित थे, देश की सम्पदाओं को लूटते थे, देशवासियों के श्रम का व उनका बौद्धिक शोषण करते थे, जिन्होंने हमारी अस्मिता को अपमान व अज्ञान के अन्धकार से कुचल दिया था, उनसे मुक्त कराने के लिए अपने तन, मन व धन को मातश्भूमि **की स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर अर्पित करने वाले भारत माता के इस महान वीर सपूत का नाम है पं. रामप्रसाद बिस्मिल।** शहीद बिस्मिल ने **२६ वर्ष की भरी जवानी में १६ दिसम्बर, १९२७** को फांसी के फन्दे को चूम कर अपना बलिदान दिया। उनके जीवन पर दश्ष्टि डालने पर ज्ञात होता है कि उनके जीवन का उद्देश्य विदेशी शासक अंग्रेजों की पराधीनता से देश को मुक्त कर सभी देशवासियों के प्राचीन धर्म व संस्कश्ति की रक्षा, सम्मानजनक जीवन के साथ देश की एकता व अखण्डता की रक्षा करते हुए सबकी शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक व आत्मिक उन्नति करना एवं वैदिक आदर्श सत्य व न्याय पर आधारित शासन स्थापित करना था।

रामप्रसाद बिस्मिल के पिता श्री मुरलीधर, चाचा श्री कल्याणमल तथा पितामह श्री नारायणलाल थे। आप चार भाई व पांच बहने थी जिनमें आप सबसे बड़े थे। पिता कुछ शिक्षित थे। ग्वालियर से आकर

शाहजहांपुर, संयुक्त प्रान्त में बसे थे। मुरलीधरजी ने पहले नगर पालिका में १५ रूपये मासिक पर सर्विस की और इसके बाद कोर्ट में स्टाम्प पेपर बेचने का काम किया। ***आपके परिवार में पुत्रियों को जन्म लेते ही मार दिया जाता था परन्तु आपके पिता ने यह कुकश्त्य नहीं किया यद्यपि आपके दादाजी का परामर्श था कि पुत्रियों को मारा जाये।*** **रामप्रसाद जी का जन्म ११ जून सन् १८९७ को हुआ।** आपकी प्रारम्भिक शिक्षा हिन्दी व उर्दू में हुई। अपनी धर्म पारायणा माताजी की प्रेरणा से आपने अंग्रेजी भी सीखी। बचपन में आपको अनेक बुरे व्यस्न लग गये। घर के पास ही आर्य समाज मन्दिर था। वहां जाने लगे। मन्दिर के पण्डितजी ने आपको ब्रह्मचर्य व व्यायाम के बारे में बताया और उसका पालन करने को कहा जिससे आपको सही दिशा मिली। आर्य समाज मन्दिर में आपको श्री इन्द्रजीत जी का सत्संग प्राप्त हुआ। उन्होंने आपको ईश्वर का ध्यान करना व महर्षि दयानन्द रचित सन्ध्या करना सिखाया। उनकी प्रेरणा से आपने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा। सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन से आपके सारे व्यस्न छूट गये और आपमें देश प्रेम व देश को स्वतन्त्र कराने की भावना उत्पन्न हुई। आपका स्वास्थ्य जो पहले खराब रहता था अब सन्ध्या, व्यायाम व योगाभ्यास से दर्शनीय हो गया। हमें आर्य समाजी मित्र, **आर्य विद्वान प्रो. अनूप सिंह** से ज्ञात हुआ कि आप अपने भव्य, प्रभावशाली व आकर्षक शरीर के कारण दूर-दूर तक प्रसिद्ध हो गये। लोग दूर-दूर से आपकी प्रशंसा सुनकर आपको देखने आने लगे।

पं. रामप्रसाद बिसिल्ल जी को आर्य समाज के सम्पर्क में आने से पूर्व अनेक दुर्व्यस्न लग गये थे। दुर्व्यस्नों के लिए पैसे चाहिये। इसके लिए वह पिता के पैसे भी चोरी कर लेते थे। दुर्व्सनों को छुपकर किया जाता है, इसलिए अन्यों पर प्रायः यह प्रकट नहीं होते हैं। रामप्रसाद जी धुम्रपान, भांग का सेवन, चरित्र बिगाड़ने वाले उपन्यासों को पढ़ना व निरर्थक घूमना-फिरना व उसमें समय नष्ट करना जैसे लक्ष्य से भटके मनुष्य की भांति कार्य करते थे। रामप्रसाद जी का भाग्योदय हुआ। संयोग से आप आर्य समाज के सम्पर्क में आये। यहां आर्यों की संगति व उनसे मिलने वाले तर्क पूर्ण सुझावों ने आपको प्रभावित करना आरम्भ किया। व्यस्नों से जीवन को होने वाली हानि का स्वरूप आप पर प्रकट होने से उनके प्रति अरूचि हो गई। हमने इस अल्प जीवन में अनेक लोगों को उठते हुए भी देखा है और वेदों व सत्यार्थ प्रकाश पढ़े

व दूसरों को सदाचारी व आर्य बनाने वाले को नाना प्रकार के बुरे कार्य करते हुए भी पाया है जिनसे चरित्र का पतन होता है। यह सामान्य बात है, ऐसी घटनायें समाचार पत्रों व टीवी आदि पर भी यदा-कदा देखने को मिलती रहती हैं। **रामप्रसाद जी में जो दूषण थे वह अज्ञानता, मन के नियन्त्रित न होने व इन्द्रियों के दास बनने के कारण उत्पन्न हुए थे, उनका दूर होना सरल था। उन्हें इनके दुष्प्रभावों का ज्ञान हुआ तो उन्होंने इसे त्याग दिया और इनके त्याग से आत्मा की शुद्धि प्राप्त करके एक अज्ञात युवा महात्मा बन गये या महात्मा बनने के मार्ग पर तेजी से बढ़ चले।**

आर्य समाज में सन्ध्या, हवन, वहां के सच्चरित्र सदस्यों एवं विद्वानों के उपदेशों, उनकी संगति, उनसे वार्तालाप व उनकी सेवा का आप पर ऐसा प्रभाव हुआ कि आर्य समाज में रहकर आप अपना अधिक समय व्यतीत करने लगे। पिता आर्य समाज के वास्तविक स्वरूप से अपरिचित थे। उन्हें अपने पुत्र रामप्रसाद का वहां अधिक समय व्यतीत करना अच्छा नहीं लगता था। इससे वह उनसे क्रुद्ध हो गये। उन्होंने रामप्रसादजी को वहां जाने से मना किया और अपशब्द कहकर धमकी भी दी की सोते समय उसका गला काट देंगें। इस कारण घर से भी उन्हें निकाल दिया। इस कठिन परीक्षा को, **जिसे छोटी अग्नि परीक्षा भी कह सकते हैं,** हमारे पं. रामप्रसाद बिस्मिल पूरी तरह सफल हुए। यदि वह पिता के अनुचित सुझाव को मान लेते तो उनका जीवन निरर्थक होता और इतिहास में जो युगान्तरकारी घटना घटी वह न हुई होती। यहां हम स्वामी श्रद्धानन्द के उदाहरण को भी स्मरण कर सकते हैं जब इस नास्तिक युवा मुंशीराम, बाद में स्वामी श्रद्धानन्द कहलाये, के पौराणिक व अन्धविश्वासों को मानने वाले पिता नानक चन्द बरेली में महर्षि दयानन्द के सत्संग में लेकर जाते हैं, इस आशा के साथ कि स्वामी दयानन्द के सत्संग व उपदेश के प्रभाव से इसकी नास्तिकता समाप्त हो जायेगी। **महर्षि दयानन्द के सत्संग से उनकी नास्तिकता भी समाप्त हुई, सारे दुर्व्यस्न भी समाप्त हुए और एक दुर्व्यस्नी युवक आगे चलकर अपने युग का युगपुरूष बन गया जिसका स्मारक गुरूकुल कांगड़ी आज भी अतीत के स्वर्णिम कारनामों को संजोय हुए उनकी साक्षी दे रहा है।** लेखक स्वयं भी अपने एक आर्य मित्र श्री धर्मपालसिंह की संगति से सन्, १९७० में अपनी १८-२१ वय में आर्य समाज के सम्पर्क में आया था। उस समय उसमें भी ज्ञान न होने कारण अभक्ष्य पदार्थों का सेवन व अन्य कुछ दुर्बलतायें थी जो आर्य समाज के साहित्य के स्वाध्याय, विद्वानों के प्रवचनों व अपने मित्र के नाना विषयों पर वार्तालाप से दूर हुई थीं।

आपको मुंशी इन्द्रजीत से सत्यार्थ प्रकाश भी पढ़ने को मिला था। सत्यार्थ प्रकाश से आपको ईश्वर, जीवात्मा, प्रकशति, धर्म, कर्म, यज्ञ, सन्ध्या, जीवन-मश्त्यु के रहस्य, पुनर्जन्म, सुख, दुख, बन्धन, मोक्ष, देश भक्ति, मातश्भूमि से प्रेम, उसकी सेवा, माता-पिता-गुरूजनों-सज्जनों-वश्द्धों की सेवा, मत-मतान्तरों का वास्तविक ज्ञान व उन सबमें सत्य व असत्य मान्ताओं का मिश्रण, धर्म केवल व केवल एक है जिसमें सर्वांश सत्य होता है, असत्य बिल्कुल नहीं आदि का ज्ञान हुआ एवं मूर्तिपूजादि पोषित पौराणिक वा कथित सनातन धर्म सहित बौद्ध, जैन, नास्तिक मत, ईसाई व इस्लाम मत की अवैदिक व अज्ञानपूर्ण बातों का ज्ञान भी हो गया। इतना ज्ञान होना, इसके धारण की भावना का होना, इनकी इच्छा, संकल्प, प्रयत्न करना व इससे सहमत होना -- यह सब एक महात्मा के लक्षण हैं। रामप्रसाद बिस्मिल भी इसके साक्षी बने व इन्हें अपने जीवन में धारण किया।

आर्य समाज, शाहजहांपुर में एक बार आर्य संन्यासी स्वामी सोमदेव जी का आगमन हुआ। स्वामीजी धार्मिक विद्वान होने के साथ-साथ देश की परतन्त्रता व उसके परिणामों से व्यथित थे। आपको इनका सत्संग प्राप्त हुआ। सत्यार्थ प्रकाश, आर्याभिविनय, संस्कश्त वाक्य प्रबोध एवं व्यवहार भानु जैसे ग्रन्थों को पढ़कर देश को आजाद कराने के बीजों का वपन तो आपके हश्दय में हो ही चुका था। उनको खाद व पानी स्वामी सोमदेव जी के सत्संग, वार्तालाप व सेवा से प्राप्त हुआ। उनके परामर्श से आपने देश की आजादी के लिए कार्य करने का अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। *आर्य मनीषी डा. भवानी लाल भारतीय* ने लिखा है कि स्वामी सोमदेव जी की शिक्षाओं से प्रभावित होकर रामप्रसाद बिस्मिल ने प्रतिज्ञा की - **'अंग्रेजी साम्राज्य का नाश करना मेरे जीवन का प्रमुख लक्ष्य होगा।'** इस प्रतिज्ञा के बाद आपने युवकों का एक संगठन बनाया। इस संगठन की योजनाओं को पूरा करने के लिए शस्त्रों की आवश्यकता थी और उन्हें खरीदने के धन चाहिये था। आपने धन की प्राप्ति के लिए एक पुस्तक लिखी जिसका नाम था - **'अमेरिका को स्वतन्त्रता कैसे मिली?'** इसकी बिक्री से प्राप्त धन अपर्याप्त था। दूसरा उपाय यह किया कि पास के एक गांव पर सशस्त्र हमला कर धन लूटा गया। यह ध्यान रखा गया कि किसी को भी शारीरिक क्षति नहीं पहुंचानी है। पराधीन भारत माता को आजाद करने के लिए उसी की सन्तानों से धन प्राप्त करने का उस समय उन्हें यही तरीका दिखाई दिया। इस घटना से आप पुलिस की जानकारी में तो आ गये परन्तु गिरिफ्तारी से बचते रहे। सन् १९२० में राजनैतिक कैदियों व अन्य अपराधियों को आम माफी दिये जाने के बाद आपके नाम जारी वारण्ट भी रद्द हो गया। तब आप अज्ञात स्थान से शाहजहांपुर आ गये। जब आपने युवकों का सशस्त्र दल बनाया तो सुप्रसिद्ध देशभक्त, शहीद व आपके अभिन्न मित्र अशफाक उल्ला खां भी आपके सम्पर्क में आये। दोनों में पक्की दोस्ती हो गई। अशफाक को अपने मित्र बिस्मिलजी को बहुत निकट से देखने का अवसर मिला। वह भी आर्य समाज मन्दिर में आने लगे। हम अनुमानतः कह सकते हैं कि उन्होंने आर्य समाज के सत्य स्वरूप को काफी हद तक समझा था। एक बार कुछ मुसलमानों ने आर्य समाज पर आक्रमण कर दिया। अशफाक उल्ला उस समय आर्य समाज मन्दिर में पं. रामप्रसाद बिस्मिल के साथ ही थे। अशफाक ने रामप्रसाद जी के साथ मिलकर आक्रमणकारियों को ललकारा था और उनके मंसूबे विफल कर दिये थे। इस मित्रता को सच्ची मित्रता कह सकते हैं और हिन्दू-मुस्लिम संबंधों की एक अच्छी मिसाल भी। इन दोनों की मित्रता के अनेक प्रसंग हैं, जो प्रेरणाप्रद हैं।

पं. राम प्रसाद बिस्मिल प्रसिद्ध शायर भी थे। आपकी रचनायें आजादी के आन्दोलन के दिनों में सभी लोगों की जुबान पर होतीं थीं। आज भी उनमें ताजगी है, देश प्रेम व हश्दय को छू लेने की अवर्णनीय क्षमता है। नमूने के रूप में कुछ को देखते हैं। फांसी क फन्दे को चूमने से पूर्व उन्होंने कहा था - *'मालिक तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे। बाकी न मैं रहूं और न मेरी आरजू रहे।। जब तक कि तन में जान रगों में लहू बहे। तेरा ही जिकर और तेरी जस्तजू रहे।।'* भारतमाता के प्रति अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए आपने लिखा था - **'यदि देश हित मरना पड़े मुझको सहस्रों बार भी। तो भी न मैं इस कष्ट को निज ध्यान में लाऊं कभी।। हे ईश भारत वर्ष में शत बार मेरा जन्म हो। कारण सदा ही मश्त्यु का देशोपकारक कर्म हो।।'** देश प्रेम पर उनकी पंक्तियां हैं - ***''हम भी आराम उठा सकते थे घर पर रहकर, हमको भी पाला था मां-बाप ने दुख सह-सह कर। वक्ते रुखसत उन्हें इतना भी न आये कहकर, गोद में कभी आंसू बहें जो रुख से बहकर।। तिफ्ल उनको ही समझ लेना जी बहलाने का। देश सेवा का ही बहता है अब तो लहू नस-नस में। हमने जब वादि-ए गुरबत में कदम रखा था। दूर तक यादें वतन आई थी समझाने को।''*** उनकी पंक्तियों **'सर फरोसी की तमन्ना अब हमारे दिल में है, देखना है जोर कितना बाजू-ए कातिल में है।''** पर तो एक फिल्मी गीत बन चुका है जो कभी देश के बच्चे-बच्चे की जुबान पर होता था। मरने से पूर्व उन्होंने लिखा - **'मरते बिस्मिल, रोशन, लाहिड़ी, अशफाक अत्याचार से, पैदा होगें सैकड़ों इनके रूधिर की धार से।'** अन्याय करना व अन्याय सहना दोनों ही गलत हैं। अंग्रेज देशवासियों पर अमानवीय

(शेष पृष्ठ ६ पर)

## देश-धर्म-संस्कशति रक्षक व स्वतन्त्रता सेनानी

# स्वामी श्रद्धानन्द

स्वामी श्रद्धानन्द, महर्षि दयानन्द सरस्वती के प्रमुख शिष्य थे। आज उनके बलिदान को ८७ वर्ष पूरे हो चुके हैं। ८८ वें वर्ष में प्रवेश के अवसर पर उनके जीवन पर एक दश्ष्टि डाल लेना हमारा कर्तव्य है। अपनी युवावस्था में स्वामी श्रद्धानन्द, मुंशीराम के नाम से जाने जाते थे। बाद में श्रेष्ठ कार्यों को करके वह महात्मा मुंशीराम के नाम से प्रतिष्ठित हुए। संन्यास आश्रम में प्रवेश करने के बाद उन्होंने स्वामी श्रद्धानन्द नाम धारण किया और आज सर्वत्र वह इसी नाम से वह प्रख्यात हैं। स्वामी श्रद्धानन्द अपनी युवावस्था के उन दिनों में महर्षि दयानन्द के सम्पर्क में आये जब वह नास्तिक बन गये थे। उनके नास्तिक होने के लिए अनेक तर्क थे जिनका समाधान उन्हें अपने किसी मित्र या श्रद्धास्पद व्यक्ति से नहीं मिला। **उन्हें लगा कि ईश्वर नाम की कोई सत्ता नहीं है।** जो लोग ईश्वर को मानते हैं, उन्हें यह अज्ञानी लोगों की कल्पना लगी। अंग्रेजी साहित्य पढ़कर उनकी नास्तिकता बहुत गहरी हो गई। इस प्रकार से सभी धार्मिक कर्मकाण्डों, ईश्वरोपासना व यज्ञ आदि को छोड़कर वह जीवन व्यतीत कर रहे थे। पिता की प्रेरणा से वह बरेली में स्वामी दयानन्द के प्रवचनों में जाते हैं। स्वामी दयानन्द के तर्क, युक्ति व प्रमाणों से भरपूर प्रवचनों को सुनकर उसका प्रभाव उनकी बुद्धि और मन पर ही नहीं होता अपितु उनकी आत्मा भी गहरी प्रभावित होती है। उन्होंने नास्तिकता के पक्षधर अपने सभी छोटे-बड़े तर्कों को स्वामी दयानन्द के सामने रखा जिनका स्वामीजी ने युक्ति पूर्वक समाधान कर दिया। स्वामी जी की युक्तियों से वह अभिभूत हो गये। नास्तिकता से सम्बन्धित सभी शंकाओं का समाधान मिल जाने पर वह बोले कि स्वामीजी आपने मेरी सभी युक्तियों व शंकाओं का समाधान तो कर दिया परन्तु मुझे अब भी ईश्वर पर विश्वास नहीं हो पा रहा है। इस पर स्वामीजी ने कहा कि तुम्हारे प्रश्न व शंकाओं के उत्तर मैनें युक्ति व प्रमाणों से दे दिये हैं। **ईश्वर पर विश्वास शंकाओं के निर्मूल हो जाने पर नहीं होता अपितु तब होता है जब स्वयं ईश्वर जिज्ञासु पर कश्पा करते हैं।** हम पाते हैं कि इसके बाद स्वामी श्रद्धानन्दजी के जीवन में अनेक उतार चढ़ाव आये और कालान्तर में उन पर ईश्वर का विश्वास ऐसा जमा कि वह महर्षि दयानन्द के अद्वितीय शिष्य बने और उन्होंने महर्षि दयानन्द के कार्यो को आगे बढ़ाया और उनको अधिकाधिक पूरा करने का प्रयास किया।

अपने अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि स्वामी श्रद्धानन्द जी के अनेक महत्वपूर्ण कार्यों में प्रमुख कार्य गुरूकुल की स्थापना, उसका संचालन व उसकी व्यवस्था आदि कार्य है। उन्होंने स्वामी दयानन्द प्रोक्त अप्रचलित शिक्षा पद्धति का समकालीन परिस्थितियों के अनुरूप नवीन प्रयोग किया जिसमें वह सफल हुए। उनके कार्यो से वैदिक धर्म व संस्कशति की रक्षा तो हुई ही, जो कि उनका मुख्य उद्देश्य व कार्य था, साथ-साथ उससे स्वदेशीकरण की भावना भी मजबूत हुई। गुरूकुल शिक्षा पद्धति ज्ञान व विद्या अध्ययन की एक पूर्ण स्वदेशी पद्धति है। इसमें वेश-भूषा व वस्त्र आदि को लें तो वह सब स्वदेशी हैं, भोजन शाकाहारी, आरोग्यदायक, पुष्टिकारक, बुद्धि-बल वर्धक व स्वदेशी है। इनसे शारीरिक विकास व बौद्धिक विकास सर्वोत्तम होता है। खेलकूद व व्यायाम भी गुरूकुलीय शिक्षा के आवश्यक अंग हैं और इनसे गुरूकुल कांगड़ी मे प्रतिभा सम्पन्न ब्रह्मचारी निर्मित हुए जिन्होंने भारत के इतिहास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया और और अन्धविश्वासों, कुरीतियों, अज्ञानपूर्ण परम्पराओं से मुक्त रहकर जीवनयापन को सही व नई दिशा दी साथ हि साथ समाज सुधार, समाज कल्याण व आधुनिक समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान किया। गुरूकुल शिक्षा प्रणाली में संस्कश्त को प्रमुख स्थान मिला। २ मार्च, १६०२ को कांगड़ी, हरिद्वार में स्थापित उनके गुरूकुल ने विश्व में हलचल पैदा की। **रैम्जे मैकडानल्ड**, जो बाद में ब्रिटेन के प्रध ाान मंत्री बने, भी गुरूकुल पधारे थे। उन्होंने अपने संस्मरण में लिखा है कि **'वर्तमान काल का कोई कलाकार यदि भगवान् ईसा की मूर्ति बनाने के लिये कोई जीवित माडल लेना चाहे तो मैं इस भव्य मूर्ति (स्वामी श्रद्धानन्द) की ओर इशारा करूंगा।** यदि **कोई मध्यकालीन चित्रकार सेंट पीटर के चित्र के लिये नमूना मांगें, तो भी मैं उसे इस जीवित मूर्ति के दर्शन करने की प्रेरणा करूगां।'** इससे हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि एक प्रकार से उन्होंने स्वामी श्रद्धानन्द को तत्कालीन ईसा मसीह व सेंट पीटर की संज्ञा दी। सन् १६१३ में लेफ्टिनेण्ट गवर्नर सर जेम्स मेस्टन भी गुरूकुल पधारे थे और महात्मा मुंशीराम जी से प्रभावित हुए। उन्होंने अपने संस्करण में कहा है कि **'एक मिनिट भी उनके साथ रहते हुये उनके भावों की सत्यता और उनके उद्देश्यों की उच्चता को अनुभव न करना असम्भव है। दुभार्ग्यवश हम सब मुंशीराम नहीं हो सकते हैं।'** श्री जेम्स मेस्टन के यह शब्द स्वामी श्रद्धानन्द को सच्चा मानव व महापुरूष कहते प्रतीत हो रहें हैं। गुरूकुल की लोकप्रियता और सफलता का यह भी एक उदाहरण है कि २१ अक्तूबर सन् १६१६ को वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड गुरूकुल पधारे। **यह घटना गुरूकुल के इतिहास को गौरव प्रदान करने के साथ इसके राष्ट्रीय महत्व को प्रदर्शित करती है।** गुरूकुल ने अनेक संस्कश्त के विद्वान, वेदभाष्यकार, अध्यापक, उपदेशक, साहित्यसेवी, स्वतन्त्रता सेनानी, लेखक, पत्रकार, राजनेता आदि समाज को प्रदान किए जिन्होंने महर्षि दयानन्द के कार्यो को बहुत आगे बढ़ाया। दूसरी तरह हम देखते हैं कि महर्षि दयानन्द के शिष्यों ने ही गुरूकुल की स्थापना से पूर्व डी.ए.वी. कालेज की स्थापना भी की। उन्होंने सामयिक पाश्चात्य मूल्य प्रधान शिक्षा को महत्व दिया और प्राचीन आर्ष संस्कश्त व्याकरण पद्धति, वेद व वैदिक ग्रन्थों के अध्ययन-अध्यापन की उपेक्षा की। यद्यपि डीएवी कालेज आन्दोलन के द्वारा देश में शिक्षा व ज्ञान में वश्द्धि तो हुई परन्तु महर्षि दयानन्द प्रदर्शित वेद-रक्षा, संवर्धन व प्रचार का कार्य डी.ए.वी. कालेज ने किया या नहीं, इसका लेखा-जोखा गुरूकुल से प्राप्त सफलताओं की तुलना में अत्यल्प व न्यून प्रतीत होता है। स्वामीजी ने केवल एक ही गुरूकुल स्थापित नही किया अपितु अनेक गुरूकुल स्थापित कर भावी पीढ़ी के सामने एक आदर्श मिसाल कायम की। कन्याओं की शिक्षाओं के लिए भी उन्होंने गुरूकुल व महाधिालय स्थापित किए जिन्होंने अपूर्व सफलता प्राप्त की। स्वामी श्रद्धानन्द ने आजादी के आन्दोलन मे भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। रौलेट एक्ट के विरोध में मार्च, १६१६ के दिनों में जो आन्दोलन हुआ उसकी दिल्ली में बागडोर स्वामी श्रद्धानन्द के हाथों में थी। **रौलेट एक्ट के विरोध में ३० मार्च, १६१६ को दिल्ली में** जो जलूस निकाला गया व सभा हुई उसकी बागडोर स्वामी श्रद्धानन्द के हाथों में थी। चालीस हजार लोग इसमें शामिल हुए। चांदनी चौक व घण्टाघर पर एक अवसर ऐसा आया जब हडताल पर नियंत्रण करने के लिए तैनात अंग्रेज सरकार के सेवक गुरखा सैनिकों ने जलूस के निकट गोली दाग दी। स्वामी श्रद्धानन्द जलूस में भीड़ चीर कर गुरखा सैनिकों के सामने आये, उन्होंने दहाड़ लगाई, पूछा गोली क्यों चलाई गई? विरोध में गुरूखा सैनिकों ने अपनी बन्दूकों की संगीनें उनके सीने पर रख दी, उन्होने शायद सोचा होगा कि यह व्यक्ति डर जायेगा। बड़े से बड़ा व्यक्ति या कोई नेता होता तो सम्भवतः डर गया होता, ***परन्तु स्वामी श्रद्धानन्द अपना सीना खोल देते हैं, और ललकारते हुए कहते हैं कि यदि हिम्मत है तो चलाओं गोली।*** एक अंग्रेज अधिकारी तभी वहां पहुंच जाता है तथा स्थिति की गम्भीरता को देख कर किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता है और उसके संकेत व आदेश से बन्दूकें नीचे झुक जाती हैं। **इस घटना से स्वामीजी दिल्ली के बेताज बादशाह बन जाते हैं। सभी हिन्दू व मुसलमान उन्हें अपना नेता स्वीकार करते हैं। इस वीरता व शौर्य से प्रभावित होकर मुसलमान उन्हें जामा मस्जिद में जुमे की नमाज के बाद उपदेश के लिए आमंत्रित करते हैं। वह वेदमन्त्र 'ओउम् त्वं हि नः पिता वसो त्वम् माता शतक्रतो बभूविथ, अधा ते सुम्निमहे।' बोल कर अपना उपदेश आरम्भ करते है और ओउम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः कहकर वक्तव्य को विराम देते हैं।** ***अपने भाषण में कहते हैं 'हम' शब्द का अर्थ है, "हिन्दू और मुसलमान।*** वक्तव्य में सभी मुस्लिम बन्धु हर्षध्वनि करते हैं। इस घटना के बाद देश में कहीं इस प्रकार का साम्प्रदायिक सौहार्द बना हो, वह हमारे ज्ञान में नही आ सका। किसी राजनैतिक, सामाजिक व धार्मिक नेता को इस प्रकार का व ऐसा अवसर व सौभाग्य नहीं मिला। **स्वामी श्रद्धानन्द जी इस महान उपलब्धि के लिए धन्य हैं।** इस घटना के कुछ ही दिनों बाद दिल्ली की फतेहपुरी मस्जिद में भी आपका सम्बोधन होता है। पंजाब में सिख भाईयों ने अमश्तसर में जब अंग्रेजों के अत्याचारों के विरूद्ध,

www.thearyasamaj.org

'गुरू का मोर्चा' आन्दोलन किया तब स्वामीजी वहां भी पहुंच जाते हैं और देशभक्ति व आन्दोलन के समर्थन में जोशीला भाषण देते हैं। उनको गिरफ्तार कर लिया जाता है और जेल में रखा जाता है। उन्हें १८ महीनों की सजा होती है। हिंसक पशुओं के पिंजरे में भी उन्हें बंद किया जाता है। यातनायें दी जाती हैं और इससे स्वामी श्रद्धानन्द एक नया इतिहास रचते हैं। जालियांवाला बाग में निहत्थे निर्दोष लोगों की हत्या का विरोध करने के लिए स्वामी श्रद्धानन्द सामने आते हैं। अमश्तसर के कांग्रेस सम्मेलन के वह स्वागताध्यक्ष बनते हैं। अपना स्वागत भाषण हिन्दी में देकर नया इतिहास रचते हैं और पहली बार कांग्रेस के मंच से दलितोद्धार का आह्वान करते हैं। उनका हिन्दी प्रेम अद्वितीय है। इसके अनेक उदाहरणो में एक है कि वह अपने लाभकारी उर्दू पत्र "सद्धर्म प्रचारक" को बन्द कर उसे हिंदी में प्रकाशित करते हैं और भारी आर्थिक हानि उठाते हैं। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने शिक्षा व आजादी के क्षेत्रों में ही काम नही किया अपितु दलितोद्धार, जांति-पांति उन्मूलन व बिछुड़ें हुए बन्धुओं के पुनर्मिलन अर्थात् शुद्धि के क्षेत्र में भी अभूतपूर्व कार्य कियें हैं। अपने बिछुड़ें हुए बन्धुओं को अपनों में मिलाने के लिए ही वह विरोधियों की असहिष्णुता के षड़यन्त्र का शिकार हुए और एक धर्मान्ध ा अब्दुल रशीद ने बीमारी की अवस्था में गोलियो की बौछार करके उनको शहीद कर दिया। हम समझते हैं कि अज्ञानी व्यक्तियों को चालाक व चतुर लोग बहका-फुसला कर सर्वत्र अपना मनोरथ सिद्ध किया करते हैं, यहां भी ऐसा ही हुआ प्रतीत होता है। ज्ञानी व सहिष्णु लोग विरोधियों के तर्क को ध्यान से सुनते हैं व उसको समझकर शान्तिपूर्वक उसका समाधान करते हैं। आर्य समाज ने सदैव ऐसा ही किया है। आजकल यह प्रवृति समाप्त हो गई प्रतीत होती है। कुछ लोगों ने आजकल आस्था के नाम पर सत्य के प्रेमियों व ज्ञानियों के मुंह पर ताला लगा दिया है। सच्ची आस्था ही आस्था होती है। सत्य से रहित या हीन अर्थात् तर्क, युक्ति व प्रमाण रहित आस्था अन्ध-विश्वास या अनास्था है। होना तो यह चाहिये कि जब किसी की बात किसी व्यक्ति की समझ में न आये या बुरी लगे तो उन लोगों के बीच शान्तिपूर्वक सम्वाद होना चाहिये। इस वार्तालाप से जो निष्कर्ष निकले उसे सभी को स्वीकार कर लेना चाहिये एवं अनावश्यक, वितण्डा नहीं करना चाहिये। वितण्डा व लड़ाई-झगड़ा करना अज्ञानता, मूर्खता व दुराग्रह है। **हम यह भी कहना चाहेगें कि विज्ञान में नया सिद्धान्त आने पर वैज्ञानिक आंख-भौं नही सिकोड़ते अपितु उस पर प्रसन्नतापूर्वक विचार करते हैं। जो बात सत्य व प्रयोग से सिद्ध होती है उसे विश! वैज्ञानिक जगत स्वीकार करता है। ऐसा ही धर्म, मत व सम्प्रदाय के क्षेत्र में भी होना चाहिये।** तभी मानवता विजयी होगी और असत्य, अन्ध विश्वास, कुरीतियों व अज्ञान को परास्त किया जा सकता है नही तो आने वाले समय में यह दुनियां रहने योग्य नहीं रह पायेगी। स्वामी श्रद्धानन्द जी को हमारी श्रद्धांजलि।

(पृष्ठ ४ का शेष)

अत्याचार करते थे। जाते-जाते भी वह देश का विभाजन करा गये और इस बात का भी प्रयास किया कि खण्डित भारत सबल देश न बन सके। रामप्रसाद बिस्मिल जी अंग्रेजों के भारतीयों के प्रति अन्याय को दूर कर देशवासियों के लिए सम्मान व ईश्वर व प्रकश्ति प्रदत्त समानता व स्वतन्त्रता के अधिकारों को प्राप्त कराना व सभी सामाजिक बन्धुओं व देशवासियों को दिलाना चाहते थे। इसी विचारधारा ने उन्हें सशस्त्र क्रान्ति का नायक बनाया। हम जब विचार करते हैं कि कोई किसी की सम्पत्ति को छीन लें या उसकी अचल सम्पत्ति पर कब्जा कर लें, तो उस अन्यायकारी को कैसे हटा कर सम्पत्ति को मुक्त कराया जाये? इसके दो ही तरीके हैं कि पहले उसे बताया व समझाया जाये कि उसने गलत किया है, वह सम्पत्ति लौटा दें। प्रायः सम्पत्ति छीनने वाला व लूटने वाला अधिक बलवान होने के कारण सत्य के आग्रह करने पर सम्पत्ति लौटाता नही हैं। यदि ऐसा होता तो चीन ने हमारी भूमि अब तक हमें लौटा दी होती। पाकिस्तान ने अनधिकश्त कश्मीर हमें सौंप दिया होता। यहां तो अन्य भागों पर भी कब्जा करने के मंसूबे बनायें जाते हैं और गुप्त रूप से उन पर कार्य भी किया जाता है जिसमें हमारे निर्दोष लोग अपने प्राणों से हाथ धो बैठते हैं। जनता के हाथ में ताकत तो होती नहीं। वह सरकार की ओर देखती है। छीनी गई अपनी सम्पत्ति को अपने शत्रु से लेने का दूसरा तरीका केवल बल प्रयोग ही बचता है। **यही तरीका बाद में महान देशभक्त नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने भी अपनाया जिसका सारे देश से उनको समर्थन मिला। उनका नारा - 'तुम मुझे खून दों, मैं तुम्हें आजादी दूंगा।' आज भी कानों में गूंज जाता है। ऐसा ही कुछ हमारे देशभक्त क्रान्तिकारी सोचते थे कि कैसे अपने अपमान को रोका जाये, हमें उचित अधिकार प्राप्त हों और देश स्वतन्त्र हो।** उनके द्वारा अपनाया गया मार्ग गलत नहीं था। रामप्रसाद जी के सामने पश्ष्ठ भूमि कुछ अलग रही होगी। उन्होंने निर्णय किया कि शस्त्रों के लिए धन की जो आवश्यकता है उसे सरकारी खजाने का लूट कर पूरा किया जाये। वस्तुतः खजाने का धन भी जनता व देशवासियों का ही धन था। योजना बनाई गई और उसके अनुसार ६ अगस्त, सन् १९२५ की रात्रि को जब रेल लखनऊ के निकट काकोरी स्टेशन पर पहुंचीं, तो उसे रोक कर उसमें सरकारी खजाने से १०,००० रूपये लूट लिए गये। यह घटना अपने आप में ही अत्याचारी अंग्रेजों के लिए एक सबक था कि उनके लाख प्रयत्नों, लोगो को दबाने व कुचलने के बाद भी ऐसी घटना घट गई। यह उनके लिए अपमानजनक था। बौखला कर इस घटना में शामिल देशभक्तों की धर पकड़ का अभियान चला। रामप्रसाद बिस्मिल पकड़ लिये गये। उन पर दबाव डाला गया कि वह अपने सभी साथियों के नाम बताये। उन्हें निष्कश्टतम् यातनायें दी गईं। वह सब उन्होने अपने देशानुराग के कारण सहन की। सरकार की ओर से दिखावे का मुकदमा चलाया गया और उन्हें मश्त्यु दण्ड के रूप में फांसी की सजा दी गई। उनके अन्य साथियों अशफाक उल्ला खां, रोशन सिंह व राजेन्द्र लाहिड़ी को भी फांसी की सजा दी गई। हम जब विचार करते हैं तो हमें लगता है कि यह लोग अपनी मातश्भूमि से प्रेम करते थे। उसे आजाद कराना चाहते थे। अंग्रेजों द्वारा जो भारतीयों का अपमान किया जाता था उसका यह लोग विरोध करते थे। इस सबका तो इन्हें पारितोषिक मिलना चाहिये था। **यदि वस्तुतः अंग्रेज न्यायप्रिय होते तो कदापि इन देशभक्त युवकों को सजा न देते।** अपने देश में भी तो वह इसी प्रकार से देश भक्ति के कार्य करते हैं। इससे यह सिद्ध है कि सत्य व न्याय का कोई गुण हमारे तत्कालीन शासकों में नही था। हमें देश के उन तत्कालीन बड़े नेताओं से भी शिकायत हैं जो इन युवकों को फांसी दिए जाने पर मौन व खामोश थे। इतना तो कह ही सकते कि यह निर्णय गलत है। अस्तु। पं. रामप्रसाद बिस्मिल को काल कोठरी में रखा गया। वहां का वातावरण पशुओं से भी बदतर था। इस पर भी उन्होंने वहां योग साधना की और यह एक सुखद आश्चर्य है कि उस दूषित वातावरण में जहां मनुष्य जीवित नहीं रह सकता, उनके शरीर का भार घटने के स्थान पर बढ़ा। वहां रहते हुए उन्होंने अपनी आत्म कथा भी लिखी, जो सौभाग्य से उपलब्ध है और सभी युवक व वश्द्धों के लिए पठनीय है। स्कूली शिक्षा में भी उसे पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाना चाहये। परन्तु कहें किसे, सर्वत्र अहितकर वातावरण है। अब से ८६ वर्ष पहले, १९ दिसम्बर, सन् १९२७ को उन्हें गोरखपुर में फांसी पर चढ़ाया गया। प्रातः उठकर उन्होंने स्नान कर व्यायाम व सन्ध्या की और हवन किया। फांसी के फन्दे पर खड़े होकर अपनी इच्छा व्यक्त की और कहा - **श्. पौ जीम कवूदसिस वि ठतपजपी म्उचपतमश्** यह कह कर वेदमन्त्र **'ओउम् विश्वानिदेव सवितरदुरितानि परासुव यद् भद्रं तन्न आ सुव।'** कह कर फांसी पर झूल गये। इस समय आपकी आयु लगभग २९ वर्ष थी। देश को आजाद कराने की उनकी भावना आंशिक रूप से सन् १९४७ को पूरी हुई। आजाद होने पर भी उनके स्वपनों के अनुरूप देश नहीं बन सका। आज भी सत्य व न्याय पर आधारित अध्यात्म ज्ञान से सम्पन्न देश के निर्माण का कार्य शेष है जो कालान्तर मे पूरा होगा। युवा पीढ़ी उनके जीवन से प्रेरणा ग्रहण करे, यह अपेक्षा की जाती है। उनके बलिदान दिवस के अवसर पर हमारी पं. रामपप्रसाद बिस्मिल को हार्दिक श्रद्धांजलि। उनके अन्य साथी अशफाकउल्ला खं, रोशन सिंह व राजेन्द्र लाहिड़ी जी को श्री सश्रद्ध सादर नमन।

**मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून**

**Date: 27-12-2013**

# हम कैसा ईश्वर चाहते हैं

- *अभिमन्यु कुमार खुल्लर*

लेख का शीर्षक अधिकांश पाठकों को बेतुका लगेगा। है भी । ईश्वर क्या बाई चॉइस होता है? इच्छा से मिलता है? वास्तविकता यही है कि ईश्वर जैसा भी है, उसके स्वरूप को हमें पहचानना होगा, समझना होगा। वैदिक युगीन ऋषि महर्षियों का चिंतन इन्हीं बिंदुओं पर केंद्रित था।

वैदिक कालीन ऋषियों ने ईश्वर का स्वरूप कैसा निर्धारित किया, उसे महर्षि दयानंद के शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है -

ईश्वर सच्चिदानंद स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है।

भू-मण्डल में ऐसे ईश्वर की स्वीकार्यता, मान्यता १ अरब ९६ करोड़ ८ लाख ५३११४ वर्ष रही। इसमें छः हज़ार वर्ष कम किये जा सकते हैं। क्योंकि विद्वान मानते हैं कि महाभारत से एक हज़ार वर्ष पूर्व वैदिक सभ्यता का तिरोहन प्रारंभ हो गया था।

वास्तविकता के धरतल पर हम विचार करें, तो उपरोक्त गुणों से संपृक्त ईश्वर की स्वीकार्यता हमें दिखाई नहीं पड़ती। आज हम ईश्वर का स्वरूप अपनी इच्छा के अनुसार निर्धारित करना चाहते हैं, या यों कहें कि हम अपनी इच्छा का ईश्वर चाहते हैं। हम माँग, मनोकामना, मन्नत पूरी करने वाला ईश्वर चाहते हैं। माँग, मन्नत यदि कब्र में लेटा हुआ मुर्दा भी पूरी कर सकता है, तो वह भी चलेगा। हमें मालूम ही नहीं है कि वेदोक्त ईश्वर ने सृष्टि रचना के साथ जीवात्मा की समस्त न्यायोचित माँगों को लोक कल्याण को जीव के चहुँमुखी कल्याण को आजीवन पूरी करने का ठेका ले लिया था। उन्हें पूरी करने का रास्ता भी बना दिया था। हम उस रास्ते पर चलना नहीं चाहते। चाहें, वेद कहे, या गीता - अन्यथा ईस्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना का यह स्वरूप नहीं होता, जो आज उपासना गृहों में सर्वत्र दिखलाई पड़ता है। लोग शुद्ध मन से ईश्वर की, केवल ईश्वर की उपासना के लिए इन उपासना गृहों में नहीं जाते। श्रद्धासुमन के साथ रिश्वत का प्रस्ताव भी अपनी आर्थिक सम्पन्नता के अनुरूप करते हैं। प्रसाद से लेकर स्वर्ण मुकुट भेंट करने तक। मन्नत पूरी न करने पर धौंस देते हैं- तेरी चौखट पर नहीं आएंगे। यह प्यार भरा उलाहना नहीं होता है। दुःख, निराशा व आक्रोश भरे उद्गार होते हैं।

इस एक बिंदु के अतिरिक्त अन्य दो बिंदुओं पर विचार करना मेरे आशय को पूर्णतया स्पष्ट करने के लिए आवश्य है।

दूसरा बिंदु है - पापाचरण से मुक्ति। महर्षि दयानंद ने ईश्वर को न्यायकारी निरूपति किया है। न्यायकारी शब्द के अंतर्गत कर्मफल प्रदाता का गुण अंतर्भुत (इनहेरेन्ट) है। यह हम नहीं चाहते। पौराणिक बंधुओं के लिए तो पाप-ताप निवारण के लिए ईश्वर की आवश्यकता ही नहीं है। गंगा मैया ही काफी है। प्रत्येक कुंभ पर करोड़ों हिंदु भक्तों के पाप गंगा मैया बिना डिटर्जेंट लगाये (बिना कर्मफल दिये) धो डालती है। यदि इस प्रक्रिया को पूर्णतया सत्य भी मान लें, तो गंगा मैया उन भक्तों से क्यों नहीं कहती कि इस बार तुम्हें पापमुक्त करती हूँ, अगली बार नहीं करूँगी। लेकिन गंगा तो मुक्तिदायिनी जल प्रवाह है। पाप करके आइये, वह पाप धो देगी। आपका काम है पाप करना और गंगा का काम है, पाप धोना। यह कार्य निरंतर उस समय से चल रहा है, जबसे गंगा को पाप धोने का धर्म धुरियों ने दे दिया था। वेदोक्त ईश्वर कहता है कि पाप कर्म से बिना यथोचित दंड पाये निवृत्ति नहीं, छुटकारा नहीं। गंभीर दुराचरण की कड़ी से कड़ी दंड व्यवस्था । प्रत्येक पापकर्म की दंड व्यवस्था। गंगा पूछती नहीं कि कौनसा पाप किया है। एक डुबकी लगाई और एक नहीं, सब पाप धुल गये।

पाप निवृत्ति का यह प्रसंग ईश्वर की न्याय-व्यवस्था से जुड़ा है। महर्षि ने संदर्भित वर्णण में ईश्वर का न्यायकारी होना भी बताया है। ईश्वर का वेदोक्त न्यायकारी स्वरूप विश्वभर के ९९.९९ प्रति जनसमुदाय को स्वीकार्य नहीं है। प्रतिसत बढ़ाकर शत-प्रतिशत कर सकता हूँ, पर अज्ञात ईश्वर भक्तों के लिए कुछ गुंजाइश तो इस अल्पज्ञ को छोड़नी ही पड़ेगी।

ईश्वर को न्यायकारी तो सब चाहते हैं। पर ऐसा न्यायाधीश, जो उनके ही पक्ष में निर्णय दे, चाहे वे गलत हों या सही हों। हम ईश्वर को भी उसी रूप में देखना चाहते हैं, जिस रूप में मानवीय न्यायालयों में दिखाई पड़ता है। मानवीय न्यायालयों में निर्णय गवाह-सबूत के आधार पर होता है। गवाह-सबूत ऐसे होने चाहिए, जिनसे न्यायाधीश पूर्णतया संतुष्ट हो। अन्यथा शक की स्थिति में लाभ आरोपी को मिलता है। हमारे यहाँ तो ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की परंपरा अक्षरशः निभाई जा रही है। सौ अपराधी छूट जावे, लेकिन एक अपराधी को सज़ा नहीं मिले, ऐसी मानसिकता से अपराधियों को सज़ा मिलने की संभावना कम होती है। न्याय व्यवस्था की कई सीढ़ियाँ हैं। ट्रायल कोर्ट से लेकर उच्चतम न्यायालय तक। फिर जघन्य अपराधों में मृत्युदंड पाये अपाराधियों की दया याचना के लिए राष्ट्रपति महोदय का द्वार खुला है। यह स्थिति है, मानवीय अदालतों की। वैदिक ईश्वर की न्याय व्यवस्था में एक मात्र न्यायाधीश वही है। न उसके नीचे कोई अदालत है और न कोई ऊपर। उसे गवाह, सबूत, सिफारिश किसी की ज़रूरत नहीं, क्योंकि वह सर्वान्तरयामी है। पक्ष और विपक्ष दोनों ही पक्षकारों के कर्मों की उसे पूरी-पूरी जानकारी है। वह न्याय करता है, फैसला नहीं। फैसले मानवीय अदालतें करती हैं। जितना बड़ा वकील, उसके (पृष्ठ १४पर)

www.thearyasamaj.org

# जहाँ भारतीयों का प्रवेश वर्जित था

*- दुर्गेश कुमार मिश्र*

गोमती के दोनों किनारों पर बसे नवाबी शहर लखनऊ ने राजपूत राजाओं, मुगल बादशाहों एवं नवाबों की शान-ओ-शौकत को तो देखा ही है, साथ ही गुलामी का दंश और देश की स्वाधीनता के लिए ब्रिटिश हुक्मरानों से दो-दो हाथ करते अनगिनत क्रांतिकारियों की बेबसी को भी झेला है। तहज़ीब और नज़ाकत का शहर लखनऊ तमाम ऐतिहासिक यादों को अपने सीने से लगाए हुए है।बेगम हज़रत महल, नाना साहेब, तात्या टोपे की वीरता का साक्षी रहा चारबाग, लामा टेनियर, दिलेखुश बाग की यादें और रेसीडेंसी में लिखी पंक्तियाँ वक्त के बेरहम थपेड़ों से भले ही धुंधला गयी हों, पर पूरी तरह मिटी नहीं हैं। नज़ाकत और नफासत के इस शहर में जगह-जगह इतिहास के किस्से बिखरे पड़े हैं। चाहे वह अमीनाबाद का झंडेवाला पार्क हो, या शहादत अली खाँ के मकबरे के सामने का विशाल बेगम हज़रत महल पार्क या महात्मा गाँधी व सरदार वल्लभ भाई पटेल की मूर्ति से सुसज्जित जी.पी.ओ. पार्क।

इन सभी ऐतिहासिक धरोहरों, ने लखनऊ की शान में चार चाँद लगाये हैं। भले ही कल का अवध आज का लखनऊ बन चुका है, पर उसका अतीत आज भी उतना ही गौरवशाली है, जितना कल था। बस आज ज़रूरत है इतिहास के आइने पर पड़ी धूल को हटाने की।

लखनऊ से कुछ ही दूरी पर स्थित हिन्दू-मुस्लिमों की मिली-जुली आबादी वाला काकोरी कस्बा नवाबों के शासनकाल में एक प्रसिद्ध व्यापारी केंद्र था। प्रसिद्ध क्रांतिकारी रामप्रसाद बिस्मिल के वीर रस वाले गीत भी यहीं गूँजते थे। यह स्थान साक्षी है, ९ अगस्त १९२५ की उस रात की घटना का, जिसने बड़ी खूबसूरती के साथ भारत में जमी ब्रिटिश हुकूमत को जड़ से हिलाकर रख दिया था। लखनऊ से सरकारी खज़ाने को ले जा रही ट्रेन पर विशेष सुरक्षा इंतज़ामात गोरी हुकूमत ने कर रखे थे, लेकिन यह ट्रेन लखनऊ से थोड़ी ही दूर काकोरी पहुँची ही थी, कि १० क्रांतिकारियों के एक दल ने रात्रि के लगभग ८ बजे ट्रेन पर हमला बोलकर और सरकारी खज़ाना गोरों से छीनकर विदेशी सत्ता को सीधी चुनौती दे दी। ये सभी क्रांतिकारी देश की विख्यात क्रांतिकारी संस्था 'हिंदुस्थान रिपब्लिकन एसोसिएशन' के सदस्य थे।

काकोरी लूट-कांड से झल्लाई गोरी सरकार ने बड़े पैमाने पर क्रांतिकारियों की धर-पकड़ शुरू की । अंततः लूट-कांड के सारे क्रांतिकारी, सिवाए एक को छोड़कर पकड़े गए। इसी काकोरी कांड से जुड़ा है, लखनऊ का रिंक थिएटर, जो कभी अंग्रेज़ों की मौज-मस्ती के लिए मशहूर था। इसके प्रवेशद्वार पर कभी लिखा था - 'भारतीयों का अंदर आना मना है।' इसी रिंक थिएटर को आज 'जीपीओ' के नाम से जाना जाता है। यह प्रसिद्ध इमारत विधानसभा के ठीक बगल में हज़रतगंज जैसे व्यस्ततम इलाके में स्थित है। यही वह स्थान है, जहाँ अंग्रेज़ी सरकार की एक विशेष अदालत ने काकोरी केस के तहत उन देशभक्त वीरों पर मुकदमा चलाया, जिन्होंने सरकारी खज़ाने को लूटने की हिमाकत की थी।

इसके विशाल प्रांगण में स्थित 'काकोरी स्तम्भ' के अनुसार क्रांतिकारी रामप्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाक उल्ला खां, राजेंद्रनाथ, लाहड़ी, और रोशन सिंह को फाँसी की सज़ा सुनाई गई और इन सभी क्रांतिकारियों को फैज़ाबाद जेल में १९ दिसंबर १९२७ को फाँसी पर चढ़ा दिया गया।

**तंग आकर हम भी उनके ज़ुल्म-ओ-बेदाद से।**

**चल दिए सूए अदम, जिन्दाने फैज़ाबाद से।।**

(अशफ़ाक उल्ला खां)

काकोरी के एक प्रमुख क्रांतिकारी चंद्रशेखर आज़ाद को गोरी हुकूमत पकड़ पाने में असफल रही। परिणामतः उन्हें बाद में फरार घोषित किया गया। इसी केस के तहत शचीन्द्रनाथ सान्याल, योगेशचंद्र चटर्जी, मुकुंदीलाल गुप्त, शचींद्रनाथ बक्शी और रामकृष्ण खत्री, गोविन्द चवणकर, भारत वीर सावरकर को भी आजीवन कारावास की सज़ा हुई थी। इस केस अभियुक्तों की निःशुल्क पैरवी बैरिस्टर बी.के. चौधरी कलकत्ता, पं. गोविंद वल्लभ पंत, चंद्रभानु गुप्त, मोहनलाल सक्सेना और के.एस. हलेजा ने की थी। एक बड़ी जद्दोजहद व तमाम कुर्बानियों के बाद मिली इस आज़ादी में साँस ले रहे लोग इस रिंक थिएटर के ऐतिहासिक महत्व से आज इसके पार्क में बैठकर अपना खाली वक्त गुज़ारते हैं। सरकारी उपेक्षा को दर्शाते इस पार्क में लखनऊ विकास प्राधिकरण द्वारा स्थापित 'काकोरी स्तम्भ' है, जिस पर उक्त शेर लिखा है -

**सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,**

**देखना है ज़ोर कितना बाजु-ए-कातिल में है।**

लेकिन आज क्रांतिकारियों के नाम की पंक्तियाँ इस कदर धुंधली पड़ चुकी हैं कि यदि इस पर आते-जाते लोगों की यदा-कदा नज़र पड़ भी जाए, तो इन्हें पढ़ पाना मुश्किल है।

www.thearyasamaj.org

# समय की चुनौती का जवाब थे श्रद्धानंद

- प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

आरनॉल्ड तोयनबी एक प्रसिद्ध समाजशास्त्री हुए हैं। उन्होंने समाज में होने वाले परिवर्तनों के संबंध में एक नियम का प्रतिपादन किया है। उनका कथन है कि समाज में जब कोई असाधारण परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है, तब वह व्यक्ति व समाज के लिए चुनौती या चैलेंज का रूप धारण कर लेती है, वह परिस्थिति व्यक्ति तथा समाज को ललकारती है, उसके सामने एक अहवान पटकती है और पूछती है कि कोई माई का लाल, जो इस असाधारण स्थिति का, इस ललकार का, इस अह्वान का मर्द होकर सामना कर सके, इस ललकार का जवाब दे सके? तोयनबी का कथन है कि जब हम वैयक्तिक या सामाजिक रूप से किसी भौतिक या सामाजिक विकट परिस्थिति से घिर जाते हैं, तब हममें या समाज में उस कठिन परिस्थिति, कठिन समस्या को हल करने के लिए एक असाधारण क्रियाशक्ति असाधारण स्फुरण उत्पन्न हो जाता है। भौतिक अथवा कठिन, विषम परिस्थिति हमें मटियामेट न कर दें। इसलिए इस परिस्थिति के अह्वान, उसकी ललकार, उसके चैलेंज के प्रति जो व्यक्ति प्रतिक्रिया करने के लिए उठ खड़े होते हैं, चैलेंज उत्तर देते हैं, ज० समाज को नया मोड़ देते हैं, वे ही समाज के नेता कहलाते हैं। जब समाज किसी उलझन में फँस जाता है, तब उसमें से निकलना तो हर एक चाहता है, हर व्यक्ति की यही इच्छा होती है कि यह संकट दूर हो, परंतु हर कोई उस चैलेंज का सामना करने के लिए आखाड़े में उतरने के लिए तैयार नहीं होता। विक्षुब्ध समाज का असन्तोष, उसकी बेचैनी, जिस व्यक्ति के प्रतिबिम्बित होने पर जो व्यक्ति उस असंतोष का सामना करने के लिए खम ठोककर खड़ा होता है, वही जनता की आखों का सरताज हो जाता है।

मैं स्वामी श्रद्धानंद के जीवन को इसी दृष्टि से देखता हूँ। वे समय की चुनौती का, समय की ललकार का जीता-जागता जवाब थे। क्या हमारे सामने चुनौतियाँ या ललकारें नहीं आती? हम हर दिन चुनौतियों से घिरे हुए हैं, परन्तु हममें उन चुनौतियों का सामना करने की हिम्मत नहीं। व्यक्ति जीवित रहता है, जब वह चुनौतियों का सामना करता रहता है। समाज की चुनौती का काम ही व्यक्ति अथवा समाज में हिम्मत जगा देता है, परन्तु ऐसी अवस्था भी आ सकती है, जब व्यक्ति अथवा समाज इतनी हिम्मत हार बैठे कि उसमें ललकार का सामना करने की ताकद ही न रहें। ऐसी हालत मेंवह व्यक्ति बेकार हो जाता है। स्वामी श्रद्धानंद उन व्यक्तियों में से थे, जो सामने चैलेंज को देखकर उसका सामना करने के लिए शक्ति के उफान से भर जाते थे। उनका जीवन हर चुनौती का जवाब था, तभी पचास वर्ष बीत जाने पर भी हम उन्हें नहीं भुला सके। उनके जीवन के पन्नों को पलटकर देखिए कि वे क्या थे? वे अपनी जीवनी में लिखते हैं कि जब उनके बच्चे स्कूल से पढ़कर आते थे, तब गाते थे- 'ईसा-ईसा बोल तेरा क्या लगेगा मोल'। आज भी हमारे सामने ऐसी कोई बात चुनौती का रूप पैदा नहीं करती। उस समय वे महात्मा मुंशीराम थे, उनके सामने बच्चों को इस प्रकार गाना एक चुनौती के रूप में उठ खड़ा हुआ, जिसकी प्रतिक्रिया के रूप में एक नवीन शिक्षा प्रणाली की नींव रखी गई। आज जो सब लोग गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के सिद्धांतों को शिक्षा के आदर्श तथा मूलभूत सिद्धांत मानने लगे हैं, उसका मूल एक चुनौती का सामना करना था, जो एक साधारण घटना के रूप में महात्मा मुन्शीराम के सामने उठ खड़ी हुई थी।

सत्यार्थ प्रकाश पढ़ते हुए उन्होंने पढ़ा कि गृहस्थाश्रम के बाद वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करना चाहिए। यह कोई नया आविष्कार नहीं था। जो भी वैदिक संस्कृति से परिचित है, वह जानता है कि इस संस्कृति में ये चार आश्रम हैं। परन्तु नहीं, उस महान आत्मा के सामने तो यह एक चैलेन्ज था। पहले सब है, परन्तु उसके लिए तो पढ़ना, पढ़ने के लिए नहीं, करने के लिए था। गुरुकुल विश्वविद्यालय की एक जंगल में स्थापना कर वे वहीं रहने लगे। मृत वानप्रस्थाश्रम को उन्होंने अपने जीवन में क्रियात्मक रूप देकर जीवित कर दिया। यह क्या था। अगर वैदिक संस्कृति की चुनौती का जवाब नहीं था। फिर वानप्रस्थाश्रम तक जाकर ही टिक नहीं गये। वानप्रस्थ के बाद संन्यास लिया और देश में महात्मा मुन्शीराम यह नाम विख्यात हो गया। ऐसे भी लोग मुझे मिले हैं, जो महात्मा मुन्शीराम और स्वामी श्रद्धानंद इन दोनों को अलग-अलग व्यक्ति समझते हैं। इसका कारण यही है कि महात्मा मुंशीराम ने जिस प्रकार लगातार चुनौती पर चुनौती का सामना किया, उसी प्रकार श्रद्धानंद ने चुनौती का सामना किया। इसलिए कुछ व्यक्तियों के लिए, जो यह नहीं जानते थे, कि महात्मा मुंशीराम ही संन्यास लेकर स्वामी श्रद्धानंद बन गये। ये नाम दो महापुरुषों के नाम हो गये। जो अपने-अपने जीवनकाल में असाधारण सामाजिक परिस्थितियों, सामाजिक ललकारों, और चुनौतियों के साथ जूझकर अपने जीवन की अमर कहानी लिख गये। गुरुकुल में रहते हुए वे एक पत्र निकाला करते थे, जिसका नाम था 'सद्धर्म प्रचारक'। यह पत्र उर्दू में प्रकाशित हुआ करता था। इसके ग्राहक उर्दू जानने वाले थे, हिन्दी जानने वाले नहीं। एक दिन वह पत्र अचानक **(शेष पृष्ठ १४ पर)**

www.thearyasamaj.org

# अंध विश्वास के विरुद्ध आवाज़ बुलंद हो

- डॉ. सुरेंद्र सिंह कादियान

अव ग्रहण के वैज्ञानिक पक्ष को देखें। विज्ञान बताता है कि सूर्य अपनी धुरी पर घूमता है। पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है और चंद्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता है। चंद्रमा पृथ्वी के प्रकाश से प्रकाशित होता है। पृथ्वी घूमती हुई जब सूर्य और चंद्रमा के बीच में आ जाती है, तो चंद्रमा सूर्य का प्रकाश पाने से वंचित हो जाता है। जिससे वह अंधःकारमय होने लगता है। इसे ही चंद्रग्रहण की संज्ञा दी जाती है। ज्यों-ज्यों चंद्रमा सूर्य और पृथ्वी की सीध से निकलता है, त्यों-त्यों सूर्य की किरणें उस पर पड़ने लगती हैं। अर्थात् चन्द्रमा ग्रहण से मुक्त होने लगता है। दूसरी स्थिति में जब पृथ्वी और सूर्य के बीच चन्द्रमा आ जाता है, तब सूर्य चंद्रमा की ओट में आता है। उतने पर ग्रहण लग जाता है। इसे सूर्य ग्रहण कहते हैं। यह क्रिया केवल भारत में ही नहीं, यूरोपीय, अमेरिकी, अफ्रीकी, अरब देशों में वी होती है। लेकिन वहाँ की जनता न तो स्नान करती है और न ही तीर्थों पर जाकर दान-पुण्य करती है। लेकिन फिर भी उनके सूर्य व चन्द्र ग्रहण से स्वतः ही मुक्त हो जाते हैं। भारत में भी यह सम्भव है।

आधुनिक विज्ञान ही नहीं, आर्य भट्टीय और सूर्य सिद्धांत जैसे भारतीय ग्रन्थों में सूर्य व चन्द्र ग्रहण की वैज्ञानिक व्याख्या उपलब्ध है। लेकिन इसके वावजूद पौराणिक आचार्यों ने न केवल अतीत में धर्मभीरू जनता का दोहन किया, वल्कि आज भी उसकी श्रद्धा, आस्था, विश्वास का दोहन निहित स्वार्थों के लिए कर रहे हैं। आर्य भट्ट कहते हैं-

छादति शशी सूर्यं शशिनं च महती भूच्छाया।

अर्थात् सूर्य ग्रहण में चन्द्रमा सूर्य को ढक लेता है और चन्द्र ग्रहण में पृथ्वी की छाया चन्द्र को ढंक लेती है। सूर्य सिद्धांत कहता है - छादको भास्करस्येन्दुरधः स्थो घनवत् भवेत्।

भूच्छायां प्रङ्मुखश्चन्द्रो विशत्यस्य भवेदसौ।।

अर्थात् बादल के समान चन्द्रमा जब सूर्य को ढंक लेता है, तो 'सूर्यग्रहण' और पूर्व की तरफ जाता हुआ चाँद, जब पृथ्वी की छाया के नीचे आ जाता है, तब 'चन्द्र ग्रहण' कहा जाता है।

उक्त विश्लेषशण से स्पष्ट है कि सूर्य और चन्द्र ग्रहण प्राकृतिक घटनाएँ हैं और सूर्य तथा चन्द्र कोई दैहिक देवता न होकर पृथ्वी की भाँति लोक हैं, जो जड़ पदार्थ है। अतः उन्हें देवता मानकर पूजना, उनकी ग्रहण से मुक्ति के लिए तीर्थाटन करना, मूर्तिपूजा करना, दान-पुण्य करना, सिवाय अन्ध विश्वास,पाखण्ड और गुरुडम के कुछ नहीं है। लेकिन फिर भी जव धर्माचार्य ग्रहण का प्रचार करते हैं, स्नान, दान, पूजा का अहवान करते हैं और उनके हुक्मनामे मंदिरों से गुंजाये जाते हैं, अखबारों में प्रकाशित होते हैं, तो धर्मभीरू जनता उनके दुष्प्रचार का, उनके बाज़ारवादी धर्मप्रचार का शिकार हो जाती है और तीर्थों पर एकत्र होने लगती है। लाखों लोग जव वस और रेल से सफर करते हैं, तो सरकार की पेट्रोल पम्प व रेल की आमदनी वढ़ जाती है। तीर्थाटन पर दुकानों का कारोवार भी वढ़ता है। अतः इस पाखण्ड का कोई क्यों विरोध करें? विरोध करने का कोई प्रयास भी करता है, तो धर्मांध लोगों को भड़काकर सड़क पर उतार दिया जाता है, उत्पात करवाया जाता है। सरकारी सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाया जाता है। क्योंकि धर्म में अक्ल की दखलंदाज़ी सहन नहीं हो पाती। लेकिन इस समूचे सन्दर्भ में धर्मशास्त्र क्या कहते हैं, उसे सुनने वा मानने को कोई तैयार नहीं होता। ग्रहण पर किये जाने वाले कथित कृत्य, तीर्थाटन, मूर्तिपूजा ये सबका सब पाखण्ड है। यह हम नहीं कहते, आर्य समाज नहीं कहता वल्कि पौराणिकों के सनातन धर्मियों के पुराण कहते हैं। भागवत स्कन्ध १० अध्याय ८४ श्लोक १३ में लिखा है -

यस्यात्मबुद्धिः कुणपे त्रिधातुके, स्वधी कलत्रादिषु भौम इज्यधीः।

यस्तीर्थ बुद्धि सलिलेन कर्हिचित्त, जनेष्वमिज्ञेषु स एव गोखरः।।

अर्थात् जल स्थलमय तीर्थ तथा मिट्टी, पत्थर की बनी मूर्तियाँ चिरकाल में भी मनुष्य को पवित्र नहीं करते। परन्तु क्षण में ही मनुष्यों को पवित्र करने वाले हैं। नाग्नि र्न सूर्यो न च चन्द्र तारका, न भूर्जलं खं श्वसनोथवाङ्मनः।।

उपासिता भेदकृतो हरन्त्यघं विपश्चिता ध्नन्ति मुहूर्त सेवया।।

- भागवत १०.८४.१२

अर्थात् अग्नि, सूर्य, चन्द्र, तारे, भूमि, जल, आकाश,वायु आदि में पूज्य बुद्धि रख कोई भी उपासना किया हुआ पाप को हरने वाला नहीं, अपितु विद्वान पुरुष ही सेवा द्वारा पाप से बचाने वाले हैं।

हमारे शास्त्रों में वर्णित है - देवो दानाद्वा, दीपनाद्वा द्योतनाद्वा कि देवता वह है, जो देता है, चमकता है, दूसरों को चमकाता है। ये देवता भी दो प्रकार के हैं। एक जड़ देवता, तथा दूसरे चेतन देवता। जैसे आदर्श माता-पिता, गुरु, अतिथि, मनीषी, साधु आत्मा ये चेतन देवता हैं और सूर्य, चन्द्र जल, वायु आदि जो जीवों का कल्याण, त्राण करते हैं, वे जड़ देवता हैं। अतः अभीष्ट हैं कि चेतन देवताओं की सेवा करके, उनका मान,सत्कार करके उनका आशीर्वाद प्राप्त किया जाये और जड़ देवताओं के गुणों को जानकर उनका ठीक-ठाक उपयोग किया जाये। वास्तव में यही देवपूजा कहलाती है। जड़ देवताओं के समक्ष हाथ जोड़ना, उन्हें जल चढ़ाना, उनकी पूजा करना, उनके नाम पर व्रत रखना, उनकी उपसना-साधना किसी कार्य के लिए करना यह सब पाखण्ड है। सूर्योपासना करने वालों की निन्दा पुराणों भी की गई है। देवी भागवत पुराण के इन श्लोकों पर दृष्टिपात करें -

क्लिश्यन्ति ते पि मनुयस्तव दुर्विभाव्यम्।

पादाम्बुजं न हि भजन्ति विमूढ़ चित्ता।।

सूर्याग्नि सेवन पराः परमार्थ तत्वम्।

ज्ञातं न तैः श्रुति शतैरपि वेदसारम्।।

अर्थात् जो सूर्य, अग्नि आदि की सेवा में लगे हैं, वह मूढ़ अर्थात् महामूर्ख हैं और उन्होंने वेद के सार को नहीं जाना है।

तीर्थेषु पशु यज्ञेषु काष्ठ पाषाण मृण्मये।

प्रतिमादौ मनो येषां ते नराः मूढ़ चेतसः।।

मृच्छिला धातु दार्वाद मूर्तावीश्वर बुद्धयः।

क्लिश्यन्ति तमसा मूढ़ा परां शान्तिं न यान्ति ते।।

अर्थात् जे मूढ़ मनुष्य तीर्थों में, पशु-यज्ञों में काठ, पत्थर और मिट्टी की मूर्तियों में मन लगाते हैं, अर्थात् श्रद्धा या पूज्य बुद्धि रखते हैं, वह सदैव क्लेश पाते हैं और कभी शान्ति को प्राप्त नहीं होते।

ये वै स्तुवन्ति मनुजा अमरान् विमूढ़ाः।
माया गुणैस्तव चतुर्मुख विष्णु रुद्रान्।।
शुभ्रांशु वहि यम वायु गणेश मुख्यान्।
किं त्वामृते जननि ते प्रभवन्ति कार्ये।।

अर्थात् जो मूढ़, अज्ञानी मनुष्य ब्रह्मा, विष्णु, रुद्रादि देवों की स्तुति करते हैं तथा जो सूर्य, अग्नि, वायु, गणेश की पूजा करते हैं, वह किसी कार्य में कभी सफल नहीं होते।

पिछले दिनों देश में विशेषतः महाराष्ट्र में गणेश चतुर्थी के अवसर पर भारी-भरकम उत्सव मनाया गया। लाखों-करोड़ों रुपये गणपति बप्पा मोरिया की भव्य मूर्तियों के निर्माण पर खर्च किया गया और फिर उन मूर्तियों को सरोवर, नदी या समुद्र में विसर्जित कर दिया गया। उक्त श्लोकों के सन्दर्भ में यह समूचा कर्म-काण्ड क्या विमूढ़ता अज्ञान और पाखण्ड ही सिद्ध नहीं होता? क्या इसे हिन्दू धर्म पर आघात मानकर अनसुना किया जाता रहेगा? क्या इसे आस्था पर कुठाराघात मानते हुए ठुकराया जाता रहेगा? वेद, दर्शन, उपनिशद्, मनुस्मृति,ब्राह्मण ग्रंथ भी क्या हिन्दुओं के धर्मशास्त्र नहीं है? यदि इनमें मूर्तिपूजा का कहीं विधान नहीं है, तो मूर्तिपूजा हिन्दू समाज में कैसे प्रचलित, प्रतिष्ठित और अक्षुण्ण है, इस पर विचार होना चाहिए। ईश्वराधना में जब एक आर्य समाजी, एक सिख, एक कबीर पंथी, मूर्तिपूजा का आश्रय नहीं लेता, तो मूर्तिपूजा के बिना एक आस्थावान हिन्दू भी ईश्वराधना क्यों नहीं कर सकता? ऋषिवर दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में मूर्तिपूजा की जो हानियाँ गिनाई हैं, उससे तो निश्चित ही मूर्तिपूजा पाखण्ड है, देश, धर्म व समाज के लिए अभिशाप है। इस अन्धविश्वास से आखिर हम कब उबर पाएंगे? धर्म के सही वास्तविक स्वरूप को समझे व अपनाये बिना क्या यह सम्भव होगा?

ग्रहों का हमारे जीवन पर उल्टा-सीधा, अनुकूल-प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यह अवधारणा ही फलित ज्योतिष का मूल है। यही करोड़ो लोगों में डर बैठाए हुए है और इसी से फलित ज्योतिष का प्रचार-प्रसार करने वालों का रोज़गार फल-फूल रहा है। इसकी आड़ में ही नगों का व्यवसाय करने वालों व पूजा-पाठ करने वालों का धंधा भी चल निकला है। अब तो चैराहे पर कम्प्यूटर से जन्मकुण्डली तैयार करने वालों की दुकानें कुल चुकी हैं। यू.जी.सी. के पूर्व अध्यक्ष प्रो. यशपालजी इस छद्म ज्योतिष को पाखण्ड मानते हैं। उनके कथनानुसार तथाकथित विज्ञान के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। उनके अनुसार जीवन की गति ग्रह, उपग्रहों से तय नहीं होती। यदि सारे ग्रह एक ही रेखा में आ जाएं, तो उनका मिला-जुला प्रभाव भी चंद्रमा के गुरुत्वाकर्षण का दस हज़ारवां भाग होगा। फिर हम कैसे मान सकते हैं कि ये ग्रह, उपग्रह आदि ही हमारे जीवन के उतार-चढ़ाव तथा जीवन की दिशा गति आदि तय करते हैं। अतः आज-कल की यह तथा कथित (फलित) ज्योतिष बकवास अंधविश्वास और तीर-तुक्का ही है। अतः हमेंइस पोंगपंथी विचारधारा से दूरर रहना चाहिए। फलित ज्योतिष में विश्वास कर हमें अपने को असहाय, अक्षम और परावलम्वी नहीं बनाना चाहिए।

ज्योतिष (खगोल विद्या) शताब्दियों से भारत में प्रचलित रही है। सूर्य सिद्धांत आर्य भट्टीय, ब्रह्म सिद्धांत सिद्धांत शिरोमणि आदि ज्योतिष के प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन कर हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि जिन बातों पर यूरोप वासी अपना अनुसंधान मानकर इतराते हैं, उन बातों को भारत ने बहुत पहले खोज लिया था। यह इतिहास सिद्ध तथ्य है कि भारतीय मनिषियों की खोज और ज्ञान ही मिश्र, अरव, यूनान से फैलता हुआ योरोप को प्रकाशित कर पाया है। भारत त्रिकाल दशा में कर्नल अलकॉट ने स्वीकार किया है कि यदि पैथेगोरस, सुकरात, अरस्तु, प्लैटो आदि यूनान देश के तत्वज्ञों के मत और विचारों की कपिल, गौतम, पतंजलि, जैमिनी, वेदव्यास आदि शास्त्रकारों के मत और सिद्धांतों से तुलना करें, तो उनमें गूढ़ समता नज़र आती है। इससे यह स्पष्ट रूप से विदित हो जाता है कि यहाँ की विद्या धीरे-धीरे पश्चिम में फैली है। यूरोप निवासियों ने बीस-बीस लाख की दूरवीनें बनाकर जिन ग्रहों की गति निश्चित की है, उन्हीं ग्रहों की गति भारतीयों ने एक बाँस की नलिका से ही यथार्थ रूप में निश्चित कर ली थी। द्रष्टव्य सिद्धांत शिरोमणि का यन्त्र अध्याय। लेकिन प्रमाद, आलस्य, और स्वार्थ के कारण भारतीय प्रज्ञा से खिलवाड़ हुआ, उपेक्षा हुई और जालग्रन्थ रच कर सच के स्थान पर झूठ परोसा जाने लगा। इस दिशा में बढ़ते हुए धर्मान्ध स्वार्थी लोगों ने मुहूर्त चिंतामणि, शीघ्रबोध, जातकाभरण, जातकालङ्कार, मानसागरी, ताजक-नीलकंठी आदि फलित ज्योतिष के ग्रंथों की रचना की। इन सब ग्रंथों की रचना संवत् १९५० विक्रम के आस-पास ही हुई है। फलित ज्योतिष वास्तव में आर्य ज्योतिष न होकर यवन ज्योतिष हैष यही कारण है कि भारतीय परम्परा का उसमें अनादर व अनदेखी हुई है। फलित ज्योतिष कितना मिथ्या, भ्रामक, विनाशकारी है और उसकी वास्तविकता क्या है इस पर आर्य मनीषी अनेक लेख व पुस्तकें समय-समय पर लिख चुके हैं। विस्तारभय से उनके निष्कर्षों को, विश्लेषण को यहाँ उद्धृत करना संभव नहीं है। हमारी अनुशंसा रहेगी कि एक बार पं. गंगा प्रसाद जी, रिटा. चीफ जस्टिस, टेहरी गडवाल की एतदविषयक पुस्तक 'ज्योतिश्चंद्रिका' एक बार अवश्य पढ़ लें, जो आर्य साहित्य मण्डल, अजमेर का प्रकाशन है। इस लेख में अन्धविश्वास के विविध स्वरूपों पर विहंगम दृष्टिपात करने का प्रयास किया गया है। हमारा आग्रह रहेगा कि भारत सरकार विशेषज्ञों का आयोग बैठाकर निष्कर्ष निकलवायें कि इन अन्धश्विासों में वास्तविकता और झूठ कितना है और यदि निरा झूठ सिद्ध हो, तो उस पर कानूनन प्रतिबन्धलगवाने के सार्तक प्रयास करें। यह युग विज्ञान, तकनीक, आधुनिक चिकित्सा, अनुसंधान और तुलनात्मक अध्ययन व पारस्परिक संवाद का युग है, जिसमें अन्ध विश्वास, पाखण्ड, रूढ़ियों, आडम्बरों, मिथ्या अवधारणाओं को धर्म के नाम पर प्रश्रय नहीं मिल सकता। अतः क्या सत्य व क्या असत्य है इसका निर्णय अब होना ही चाहिए, जिससे अशिक्षित, अर्धशिक्षित, धर्मभीरू जनता का आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, मानिसक व आत्मिक शोषण न हो। यह तभी संभव होगा, जब आर्य समाज के साथ-साथ देश का सशक्त मीडिया भी आवाज़ बुलंद करके सरकार पर अपना दबाव बनाये। डॉ.राम प्रकाशजी ने इस दिशा में शंखनाद कर दिया है। सैकडों, हज़ारों शंख एक साथ गूँजेंगे, तब वही बहरी सरकार हरकत में आएगी।

(समाप्त)

# कसाइयों की सभ्यता

इसे पकड़ो, मारो, काटो और खा जाओ। आज के तथाकथित सभ्य विश्व की यही सभ्यता है। जंगली लोग भी तो ऐसा ही करते हैं। फिर क्या अंतर रह गया जंगली और शिक्षित समाज में? क्यों न इसे कसाइयों की सभ्यता कहा जाए? आज विश्व की ९५ प्रतिशत जनसंख्या मांसाहारी है। मांसाहार मनुष्य से उसकी मानवता छीन लेता है। परिणाम सामने है। मांसाहारी आपस में लडते रहते हैं। साम्राज्यवाद, भोगवाद, पूँजीवाद, आतंकवाद जैसे उपद्रव मात्र मांसाहार के कारण हैं। क्योंकि मांसाहारी धर्म का ढोंग कर सकता है। मज़हब या रिलीजन का अपने को फॉलोअर बता सकता है, लेकिन अध्यात्म से शून्य होने पर ये सब अर्थहीन, व्यर्थ है।

भारत अन्य सब देशों से विशेष है। यहाँ की ३९ प्रतिशत जनसंख्या शाकाहारी है। यह प्रतिशत आंकड़ा भी गत सहस्त्र वर्ष के परतंत्रता काल में बहुत कम हुआ है। अन्यथा भारत में मांसाहार का प्रचलन नगण्य था। हमारे राष्ट्र में एक मापदंड था कि जुआ खेलने वाला, मदिरा पीने वाला, पर पुरुष या पर स्त्री के साथ गमन करने वाला और मांसाहारी ये सब लोग गये-गुज़रे अधम होते हैं और फिर ऐसों की संख्या भी बहुत कम रहती थी। यही तो भारत का चरित्रबल था, जिसे फिर से प्राप्त करना है।

मुगलों और अंग्रेज़ों ने हमें भ्रष्ट करने में भरपूर ताकत लगायी। और आज यदि हमारी स्वतंत्र भारत की सरकारें भी हमारी सभ्यता और संस्कृति को तहस-नहस करने के षडयंत्र करें, तो क्या अंतर करेंगे। आप परतंत्रता और स्वराज में यदि हमारी सरकारें भारत स्वाभिमान से ओत-पेरोत होती या हों, तो भारतकी संस्कृति को परिष्कृत करके स्वदेश में और विश्व में भी इसका प्रचार हो सकता है, जिससे पूरे संसार का कल्याण हो। परस्पर देशों में सद्भाव हो। प्राणी मात्र का कल्याण हो। विश्व भारत को आदर और सम्मान के दृष्टिकोण से देखें। भारत को अपना गुरु मानें। निःसन्देह ऐसा हो सकता है। इतिहास बतलाता है भरत जब अपने चरम उत्कर्ष पर था, तब उस काल में यहाँ वधशालाएँ नहीं होती थी। गो-पालन बड़े उत्साह से होता था। भारत में अरब, तुर्क और यूरोपीय सत्ताओं के अलावा सभी शासकों ने गो वध सदा प्रतिबंधित रखा था। यहाँ गोहत्यारे को मृत्युदंड तक के प्रावधान थे। आज तो एशिया के सबसे बड़े तीन कत्लखाने चीन या पाकिस्तान में नहीं हैं। ये हैं भगवान महावीर के भारत में। श्रीकृष्ण के भारत में और गांधीजी के भारत में। क्यों हो रही है इन आदर्शों की उपेक्षा। उत्तर स्पष्ट है। हमारी सरकारों की इच्छा।

वाजपेयी सरकार ने सन् १९९९ में गो-मांस के आयात और निर्यात दोनों पर प्रतिबंध लगा दिया था। आज भारत में मात्र तीन राज्य ऐसे हैं, जहाँ गो-हत्या पूरी तरह प्रतिबंधित है। ये तीन राज्य हैं- गुजरात, मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ और तीनों ही भाजपा द्वारा सासित हैं। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने अपना संकल्प दोहराया है कि वे मध्य प्रदेश में किसी नये कत्लखाने और शराब कारखाने को कोलने की अनुमति नहीं देंगे। साथ ही पुराने कत्लखानों के विस्तार को भी अनुमति नहीं देंगे। भारत के संविधान का अनुच्छेद ४८ स्पष्ट रूप से सरकारों पर यह जिम्मेदारी डालता है कि वे गाय-बछड़े एवं दुग्धदाता व भार वाही पशुओं का संरक्षण करेगी और उनका वध रोकेगी। अनुच्छेद ५१-क के अन्तर्गत सभी प्राणियों के प्रति दयाभाव रखना भी नागरिकों का एक मूल कर्तव्य बताया गया है। संविदान की समवर्ती सूची की १७वी प्रविष्टि में पशुओं के प्रति क्रूरता रोकना भी सराकारी दायित्व है। राज्य सूची की १५वीं प्रविष्टि प्रांतीय सरकारों पर पशुधन के विकास का दायित्व डालती है। पशुधन का विकास ? हाँ पशुधन का विकास हमारी यू.पी.ए. सरकार के पशुपालन व डेयरी विभाग ने बारहवीं पंचवर्षीय योजना (२०१२-१७) के दौरान गो मांस निर्यात खोल देने का प्रस्ताव योजना आयोग को सौंपा है। यदि हम सबकी ओर से इसका विरोध नहीं हुआ और हमने फिर से यू.पी.ए. सरकार को सत्ता में लाया, तो गो मांस निर्यात फिर से होना निश्चित है। वर्ष १९४७ में १८ करोड़ गोवंश था, जो आज अनुमानित ४ करोड़ से भी कम बचा है। देश में दूध की कमी है। छोटे बच्चे और गर्भवती माताएँ कुपोषण का शिकार हैं। नकली सिंथेटिक दूध की खबरें सुनने को मिलती हैं और हमारी यूपीए सरकार युरोप-अमेरिका और अरब देशों को हमारी गो-माता का मांस परोसने की योजना बनाती है। भाईयों, नहीं जगे, तो गो-हत्या के जघन्य पाप के हिस्सेदार हम भी होंगे।हम चाहते हैं कि भारत से गो-हत्या का कलंक पूरी तरह मिटे। सम्पूर्ण भारत में गो-हत्या पर प्रतिबंध लगे। तो ऐसा करने के लिए आज हमारे पास मौका है। इसके लिए हमें आगामी २०१४ के लोकसभा चुनाव में केंद्र में ऐसी सरकार चुनकर भेजनी है, जो स्वयं यह इच्छा रखती हों कि गो-हत्या पर सम्पूर्ण प्रतिबंध लगे।

*- गिरीश त्रिवेदी*

करने का अभिप्राय इतना ही बताना है कि पुराणों तक में छोटे - बड़े, पति-पत्नी, श्वसुर-जामाता, भाई-बहन, गुरु-शिष्य, माता-पुत्र सभी अभिवादन के लिए नमस्ते का ही प्रयोग करते हैं।

गरुड पुराण में ५६ बार, देवी भागवत में ६६ बार, ब्रहांड में ९५ बार, कुर्म में ९९ बार, शिव पुराण में १४९ बार, भविष्य में २३० बार, पद्म में ३३५ बार और स्कंद में (पाँचवें खंड तक ) ५५३ बार - इस प्रकाक पुराणों में ही कम से कम १७४६ बार 'नमस्ते' का प्रयोग हुआ है। यहाँ पुरानों का समर्थन लेष भी नहीं है, पुराण तो कपोल-कल्पित और अनार्ष ही है। इनका देने का अभिप्राय है कि इन पुराणों को मानने वाला जो संघ है, वह भी नमस्कार के पीछे पड़ा है, वेदादि में वर्णित नमस्ते इन्होंने नहीं अपनाया।

गृहस्थों का कर्तव्य कर्म का निर्देष करते हुए महर्षि दयानंद संस्कार विधि में लिखते हैं - 'सदविद्या वृद्धों और वयोवृद्धों को 'नमस्ते' अर्थात् उनका मान्य किया करें।'

व्यवहार भानु में भी लिखा है - 'जब कोई सभ्य मनुष्य विद्वानों की सभा में वा किसी के पास जाकर नमस्ते आदि करके।' यहाँ महर्षि ने भी सर्वत्र नमस्ते को ही कहा, माना है। नमस्ते करने का प्रकार -दोनों हाथ जोड़कर, हाथों को हृदय से (छाती के बीच) स्पर्श करते हुए, किंश्चित नतमस्तक होकर ही 'नमस्ते'शब्द का उच्चारण करना चाहिए। मस्तिष्क ज्ञान का, हाथ शक्ति का और हृदय श्रद्धा व प्रेम का केंद्र है। सो हृदय को स्पर्श करते हुए हाथ जोड़ किंश्चित नतमस्तक हो नमस्ते करने का अभिप्राय है - ज्ञानपूर्वक, श्रद्धा और प्रेम सहित अपने सामत्य से किसी का यथोचित अभिवादन करना, अभिवादन के रूप में छोटे अपने बड़ों के प्रति श्रद्धा और आस्था व्यक्त करते हैं, बड़े छोटों के प्रति अपना स्नेह व आशिर्वाद प्रकट करते हैं और बराबर वाले एक-दूसरे के प्रति मैत्री भाव से एक-दूसरे से सहयोग की कामना करते हैं। इसी प्रकार पुत्र माता-पिता के सामने और शिष्य गुरु के सामने आदर-सत्कार की भावना से नमन करता है, तो माता-पिता और गुरुजन स्नेह करने व आशिर्वाद देने के लिए झुकते हैं। इसलिए अभिवादन करते समय 'नमस्ते' का बोलना ही उपयुक्त है। इसी को बोलें और अन्यों को सिखावें, बतावें, आर्ष परम्परा का वहन करें। नमस्ते के विषय में इतना ही।

# ऐसे हो सकती है आर्य समाज की उन्नति

आर्य समाज एक क्रांतिकारी आंदोलन है। महर्षि दयानंद ने कहा था कि मैंने आर्य समाज को किसी नये मत अथवा संप्रदाय के रूप में स्थापित नहीं किया। मेरा धर्म तो सत्य, सनातन वैदिक धर्म है, जो ब्रह्मा से जैमिनी मुनी तक चलता आया है।

आर्य समाज मुल्तान (अब पाकिस्तान के मंत्री डॉ. दयाराम वर्मा को पत्र लिखा था कि आर्य समाज के लोगों में जनगणना धर्म के खाने में वैदिक और जाति के खाते में आर्य लिखाया करें। परंतु आर्य नेताओं ने इस ओर ध्यान नहीं दिया और अपना धर्म हिन्दू ही लिखाते रहे। उन्होंने आर्य समाजों में साप्ताहिक सत्संग करने का आदेश दिया था और सब अपने घरों में हवन करते हैं, इन लोगों को अपने-अपने घरों में प्रातः, सायं संध्या और हवन करने का निर्देश दिया था, परंतु बहुत कम लोग अब अपने घरों में हवन करते हैं, इसलिए अधिकांश परिवार आर्य नहीं बने।

कुछ आर्य समाज मंदिरों में दैनिक हवन-सत्संग होता है। परंतु सब आर्य समाज मंदिरों में प्रातः-सायं दोनों समय संध्या तथा भजन इत्यादि होने चाहिए। हवन चाहे दिन में एक ही बार किया जाए, सब लोगों को परिवार सहित इसमें भाग लेना चाहिए और अपना धर्म ही लिखना-लिखाना चाहिए तभी हमारे परिवार वैदिकधर्मी और आर्य समाजी बनेंगे। क्योंकि किसी धर्म को मानने वाले लोग अपने-अपने धर्म के बड़े पक्के होते हैं।

हम हिन्दुओं से अलग नहीं हैं। परंतु हिन्दु कोई धर्म नहीं है। क्योंकि इसमें तो अलग-अलग विचारों के लोग हैं। हमारा प्राचीन नाम भी हिन्दु नहीं है। हमारे सब धर्म ग्रंथों में आर्य नाम ही लिखा है। आर्य समाज के लोगों को सबसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करना चाहिए। किसी भी मतवाले से हम द्वेष न करें। आर्य समाज के छठे नियम में लिखा है 'संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है। अर्थात शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।' मनुष्य होने के नाते सब भाई-भाई है। इसलिए सबसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करो, परंतु अपने सिद्धांतों का दृढ़ता से पालन करें।

उड़ीसा के स्वामी धर्मानंद ने २०० परिवारों को वैदिक धर्म की दीक्षा दी है। इससे वैदिक धर्म अस्तित्व में आ गया है। इससे आर्य समाज की उन्नति होगी। परंतु केवल संध्या-हवन से ही आर्य समाज की उन्नति संभव नहीं है। वैदिक सिद्धांतों का प्रचार करना भी आवश्यक है। इसके लिए आर्य समाजों को आर्य समाज मंदिरों से बाहर निकलकर जनता के बीच जाना होगा और महीने में कम से कम एक बार किसी कॉलोनी अथवा पार्क में वेद प्रचार की व्यवस्था करनी होगी, क्योंकि देखने में यह आया है कि आम जनता के लोग आर्य समाज मंदिरों में नहीं आते। आर्य समाजों को परोपकार के कार्य अर्थात् योग शिविर, औषधालय, वाचनालय भी आर्य समाज मंदिरों में चलाने होंगे। युवकों के लिए विशेष कार्यक्रम किये जाने आवश्यक है. जो कि आज-कल पश्चिम का अंधानुकरण कर रहे हैं। छोटी समाजें परोपकार के कार्य करेंगी, तो उन्हें धन की कमी नहीं होगी, परंतु निष्ठावान कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। रात्रि के समय आर्य-समाज मंदिरों में प्रौढ़ शिक्षा केंद्र भी सरकार की सहायता से चलाये जा सकते हैं। आर्य समाजों को सब त्योहार श्रद्धापूर्वक मनाने आवश्यक हैं।

*- अश्विनी कुमार पाठक*

(पृष्ठ ७ का शेष)

तर्कों की उतनी पैनी धार, उतना ही फैसला। उसके पक्षकार के पक्ष में जाने की प्रबल संभावना। लेकिन कभी यहाँ भी दाँव गलत पड़ जाता है। एक पेशी के साढ़े चार करोड़ रुपये डकार लेने के बाद भी जेठ मलानी आसाराम बापू को ज़मानत नहीं दिलवा सके। खैर । छोड़िये।

वेदोक्त ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वान्तरयामी होने में यानि जहाँ प्रकरण घटित हुआ, वहाँ भी वह मौजूद था। जिन व्यक्तियों के बीच घटा, उनकी आत्मा के साथ विराजमान था। इसलिए वह यथातथ्य न्याय करता है। उसे डराया, फुसलाया नहीं जा सकता। उसके निर्णय की अपील नहीं, क्योंकि उसके ऊपर, नीचे कोई नहीं। दंड कम-ज्यादा होने की गुंजाइश नहीं। व्यक्ति जानता है, उसने पाप किया है, अपराध किया है। तरुण तेजपाल की तरह अपराध की स्वीकृति करने पर, पीड़िता से क्षमायाचना करने पर तथा स्वयं को कार्य से छह माह के लिए निर्वासन का दंड भोगने पर भी अपराध की निवृत्ति नहीं होगी। बताइये ऐसा ईश्वर कौन चाहेगा?

इस्लाम व ईसाईयत के पापाचरण से मुक्ति, छुटकारे के दावे यदि सामान्य बौद्धिक स्तर पर स्वीकार्य होते, तो संपूर्ण विश्व बिना खून-खराबे के स्वतः प्रसन्नतापूर्वक ये धर्म अपना लेता और पूरी शांति से रहता है। लेकिन ऐसा है नहीं। इस्लाम में अल्लाह ताला का न्याय रसूल की सिफारिश पर निर्भर करता है। और केवल इस्लाम के अनुयायियों पर ही लागू होता है। वेदोक्त ईश्वर की तरह, विश्व के समस्त मानव समुदाय पर नहीं। इस्लाम में अनुयायियों के गुनाह सुनाने- बताने के लिए रसूल की आवश्यकता है औ इस जीवनकाल में पौराणिक भाइयों की तरह पाप निवृत्ति की कोई व्यवस्था नहीं है। दूसरे अल्लाह ताला की अदालत का फैसला केवल एक दिन यानि कयामत के दिन ही होगा। तब तक कबर में रहना होगा।

ईसाईयत में यह कार्य ईसा मसीह करते हैं। उन तक सिफारिश पहुँचाने का काम पादरी लोग पाप की स्वीकृति (कन्फेशन) कराकर करते हैं। इस तरह ईसाईयत में पाप मुक्ति की दो टियर वाली व्यवस्था है। पाप कर्मों की मुक्ति की गारंटी दोनों धर्मों (मतों) में है। अब आप ही बताइये, हमें किस धर्म को मानने में लाभ है। एक वह, जो पाप कर्मों से मुक्ति की गारंटी, शत-प्रतिशत गारंटी दें या वह, जो न्यायानुसार दंड विधान की व्यवस्था करें। बड़ा कठिन है वेदोक्त न्यायकारी ईश्वर को मानना। वेदोक्त संस्कृति, उसकी ईश्वर की अवधारणा, सृष्टि उत्पत्ति के साथ एक अरब, ९६ करोड ८ लाख ५३ हज़ार ११४, (-) ६ हज़ार वर्ष तक भू मंडल पर रही। इस विरासत का अंतिम उत्तराधिकारी महर्षि जैमिनी को माना जाता है। छः हज़ार वर्ष के अंतराल के पश्चात गुरु विरजानंदजी महाराज ने इस विरासत को संभालने का दायित्व शिष्य दयानंद को सौंपा। जिस पथ पर महर्षि दयानंद को चलना पड़ा था, वह पथ आज भी उतना ही कंटकाकिर्ण है और उस पथ पर चलने वाले का हश्र भी उतना ही सुनिश्चित है, जो महर्षि दयानंद का हुआ।

---

(पृष्ठ ९ का शेष)

सब ग्राहकों के पास उर्दू के बजाए हिन्दी में पहुँचा। यह क्या चुनौती का जवाब नहीं था? जिस व्यक्ति ने घोषणा की हो, कि वह गुरुकुल में ऊँची से ऊँची शिक्षा मातृ-भाषा हिन्दी में देने का प्रबंध करेगा, उसका पत्र उर्दू मेंप्राशित हो- यह विडम्बना थीं। उन्हें मालूम था कि एकदम उर्दू से हिन्दी पत्र करनेसे ग्राहक छंट जाएँगे, परन्तु इस चैलेंज का उन्हें सामना करना था। परिणाम यह हुआ कि उनकी आवाज़ को सुनने के लिए ग्राहकों ने हिन्दी सीखना शुरू किया और पत्र के ग्राहक पहले से कई गुना बढ़ गए। लोग हिन्दी की दुहाई देते और उर्दू या अंग्रेजी लिखते-बोलते थे, परन्तु उस महान् आत्मा के लिए यही बात एक चुनौती का काम कर गई। वे किस प्रकार चुनौती का सामना करते थे- इसके लिए एक नहीं, अनेक उदाहरण हैं। सत्याग्रह के दिनों में जब जनता जुलूस दिल्ली के घंटाघर की तरफ बढ़ता जा रहा था, तब गोरे सिपाहियों ने जुलूस को रोकने के लिए गोली चलाने की धमकी दी थी। यही धमकी उस महान आत्मा के लिए भारत माता की बलिवेदी पर अपने को कुर्बान करे की ललकार थी। साधारण मिट्टी के लोग उस धमकी को सुनकर ही तितर-बितर हो जाते, परन्तु श्रद्धानंद ही था, जिसने छाती तानकर गोरों को गोली चलाने केलिए ललकारा। समाजशास्त्र का यह नियम है कि असाधारण परिस्थिति उत्पन्न होने पर महान् आत्मा के हृदय में असाधारण स्फूरण हो जाता है, असाधारण क्रियाशक्ति जो उसे समकालीन समाज से बहुत ऊँचे ले जाकर शिखर पर खड़ा कर देती है। मुझे इस स्थल मथुरा शताब्दी की एक घटना स्मरण हो आती है। उत्सव हो रहा था। स्वामीजी उत्सव का संचालन कर रहे थे। मुझे उन्होंने अपने पास कार्यवाही के संचालन को बैठाया हुआ था। अचानक खबर आयी कि शहर में दंगा, पण्डों ने आर्य समाजियों को पीटा, उन पर लट्ठ चलाए। स्वामीजी इस समाचार को सुनते ही मुझसे कहने लगे, देखो कार्यवाही बदस्तूर चलती रहे, तुम यहाँ से मत हिलना। मैं मथुरा शहर जा रहा हूँ। स्वामीजी उसी समय घटना स्थल पर पहुँचे और स्थिति को संभालकर लौटे। उनके जीवन की एक-एक घटना तोयनबी के इस समाज शास्त्रीय नियम की विषद व्याख्या है, कि विकट परिस्थिति आने पर प्रत्येक व्यक्ति उस परिस्थिति से निकलने केलिए जूझना चाहता है, परन्तु भीरुता के कारण जूझ नहीं पाता। उस समय कोई महापुरुष होता है, तो सब पीड़ा को अपने हृदय में समाकर परिस्थिति की विषमता से लड़ने के लिए खड़ा हो जाता है, और जब कोई ऐसा महापुरुष सामने आता है, तब कई सिर उसके पैरों पर नत हो जाते हैं। समय की चुनौती का जवाब देने वाले महा पुरुष भारत में हुए हैं। उनकी श्रेणी में श्रद्धानंद का नाम स्वर्णाक्षरों में लिका जा चुका है। ऐसी महान आत्मा को मेरा बार-बार नमस्कार।

www.thearyasamaj.org

# हम गोहंता नहीं, गो रक्षक बनें

- डॉ. सुरेन्द्र सिंह कादियाण

**गाय को केवल दूध तथा बैल को भार ढोने वाला पशु मानने की सोच अब बदलने लगी है। इन संस्थाओं ने अब कुछ ऐसे गोबर व गोमूत्र से तैयार उत्पाद बनाये हैं जिनके बारे में कल्पना भी नहीं की जा सकती थी जैसे मच्छर क्वायल, अगरबत्ती, डिस्टैम्पर, स्नान का साबुन, दन्त मंजन, गमले, कागज, कपड़ा, बैलचालित ट्रैक्टर, विद्युत जनित्र, जल अग्नि ध्वनि तथा रेडियेशन निरोधी टाइल्स तथा शंखपुष्पी, तुलसी, ब्राह्मी तथा गोमूत्र से तैयार गोपेय कोला नामक शीतल पेय। अब एक ऐसा यन्त्र तैयार किया जा रहा है जिससे एक बोतल गोमूत्र से एक घर को 6-7 दिन तक प्रकाशित रखा जा सकेगा। जयपुर के गो सेवा केन्द्र में बैलों की सहायता से विद्युत उत्पादन हो रहा है जिसका उपयोग बल्ब और पंखे चलाने में होता है। यदि इन सबको व्यापक स्तर पर विकसित किया जाये तो न केवल प्रतिवर्ष अरबों रुपयों की विदेशी मुद्रा कमाई जा सकती है बल्कि रासायनिक उर्वरकों, कीट व खरपतवार-नाशकों, डीजल पेट्रोल, रसोई गैस, सी. एन. जी., वाहन ईंधन, विद्युत, कोका-कोला, पैप्सी, कोला, कागज, कपड़ा तैयार करने वाले भारी उद्योग तैयार हो सकते हैं। इससे गाँवों की शहरों पर निर्भरता लगभग खत्म हो जायेगी और वे रसोई गैस, खाद, ईंधन, बिजली आदि के मामलों में आत्म निर्भर हो जायेंगे। यदि देश को केवल रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों से छुटकारा मिल जाये तो कैंसर, दमा, किडनी फैल्योर, पीलिया, तपेदिक, हृदय रोग, मधुमेह, कुपोषण आदि के रोगियों की संख्या घट कर एक चौथाई रह जायेगी और एलोपैथिक औषधियों पर प्रतिवर्ष खर्च होने वाली अरबों रुपये की विदेशी मुद्रा बचाई जा सकेगी।**

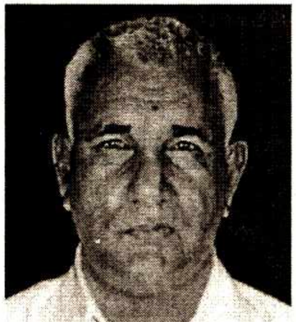

विश्व की प्राचीनतम निधि माने जाने वाले ऋग्वेद में गाय को अवध्य प्राणी घोषित किया गया है। कारण, यह प्राणी कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था का मूलाधार रहा है, जन्म देने वाली माँ के बाद बच्चे का आजीवन पालन पोषण अपने दूध, दही, छाछ, मक्खन, घी से करने वाला प्राणी भी यही रहा है, आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को पंचगव्य से पल्लवित करने वाला प्राणी भी यही है, गाय से समुत्पन्न बैल हल, सुहागा, ऊद, ट्रिलर, गाड़ी, तांगा, कोल्हू, रहट, घास काटने की मशीन, चलाने वाला एकमात्र उपयोगी पशु है और मरणोपरान्त भी गोवंश का चर्म, अस्थि, आंत, सींग सभी किसी न किसी वस्तु निर्माण में काम आते हैं। गोवंश की उपयोगिता का यह स्थूल सा विवरण है जिससे हम सभी परिचित हैं। विज्ञान, तकनीक और अनुसंधान के क्षेत्र में पिछली सदी में जो प्रगति हुई है उसने गाय की उपयोगिता के बारे में और अधिक तथ्य जुटाये हैं। उदाहरणत: प्रत्येक गोधन से प्राकृतिक रूप से 32 बोरा यूरिया, 18 बोरा सुपरफास्फेट तथा 54 बोरा पोटाश प्राप्त होता है भले ही वह दूध देने वाला अथवा न देने वाला हो, वृद्ध और अशक्त हो अथवा लूला लंगड़ा हो। एक गोधन जितने मूल्य का चारा खाता है उससे पांच गुना अधिक मूल्य का गोबर उत्पादित करता है तथा

निसर्जित गोमूत्र का अतिरिक्त लाभ

बारे में चाहे जितना भ्रम हमारे वैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों और सरकारों ने पाल रखा हो लेकिन विदेशियों की नजरों में भारतीय नस्ल की गायें आज भी प्रतिष्ठा पाये हुए हैं। भूतपूर्व राष्ट्रपति ए. पी. जे. अब्दुल कलाम जब नाइजीरिया की यात्रा पर गये थे तो वहां की सरकार ने उनसे पांच हजार गंगातीरी नस्ल की गायें

बनाने की आधुनिक तकनीक से कम गोबर से अधिक उपयोगी खाद अब तैयार की जाने लगी है जो रासायनिक उर्वरकों का सशक्त विकल्प तैयार करने में समर्थ है। लेकिन देश-विदेश की मांस लॉबी, रासायनिक उर्वरक लॉबी, वनस्पति घी निर्माता लॉबी, जूता निर्माण लॉबी आदि चर्म उद्योग लॉबी, ट्रैक्टर लॉबी, एलोपैथिक दवा लॉबी का भारत

www.thearyasamaj.org

विसर्जित गोमूत्र का अतिरिक्त लाभ देता है। यदि वह दूध भी देता हो तो उसे सोने में सुहागा माना जायेगा। एक गोधन से औसतन प्रतिदिन 10 किलोग्राम गोबर और 15 लीटर गोमूत्र प्राप्त होता है। इस समय देश में जितना गोधन है उससे प्रतिदिन 22 लाख टन गोबर प्राप्त होता है जिसका मूल्य 55 करोड़ रुपये आंका गया है। प्रत्येक स्वदेशी गोधन अपने जीवनकाल में 5400 लीटर बायोगैस का उत्पादन कर सकता है जो 6.8 करोड़ टन लकड़ी दहन से प्राप्त ऊर्जा के बराबर है। अर्थात् एक गोधन अपने जीवन में 14 करोड़ वृक्षों को सुरक्षा प्रदान करता है। आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में गोमूत्र का प्रयोग सदियों से होता आ रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू.एच.ओ.) ने चिंता जताई है कि वर्ष 2020 तक प्रति जैविक (ऐण्टीबॉयटिक) दवाएँ निष्प्रभावी होने लगेंगी तथा संक्रामक रोगों के नियंत्रण में कठिनाई आयेगी। ऐसी विकट स्थिति में देसी गाय का मूत्र ही ठोस विकल्प बन कर सामने आ सकेगा क्योंकि गोमूत्र एक सशक्त जैव उर्वरक होने के साथ-साथ उच्च क्षमतायुक्त कीटनाशक एवं कीटनियंत्रक भी है। ज्ञातव्य रहे कि लगभग एक हजार वर्ष पुराने 'विश्व-वल्लभ' ग्रन्थ में उल्लिखित गोमूत्र, नीम और लहसुन के संयोग से निर्मित जैव खाद का अमेरिकी पेटेण्ट, भारतीय वैज्ञानिक प्राप्त कर चुके हैं। गोमूत्र कम से कम पांच सौ रोगों की औषधियों में काम आता है। गोमूत्र का नित्य सेवन करने से मनुष्य निरोग एवं स्वस्थ रहता है। उदर रोगों में तो यह रामबाण है ही अब ब्लड कैंसर निवारण में भी इसका सफल परीक्षण हो चुका है। जागरूकता अभियान चलने से मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, छत्तीसगढ़ में हजारों देशी-विदेशी नागरिक गोमूत्र का नियमित सेवन करने लगे हैं। वैज्ञानिक परीक्षणों से सिद्ध हो चुका हैं कि विदेशी गाय की नस्लों की आयु देशी गायों की तुलना में आधी है और विदेशी गाय के पंचगव्यों (दूध, घी, गोबर, मूत्र) में जैव-प्रजनन उपचार क्षमता भारतीय गोवंश की तुलना में शून्य है। इसे दुर्भाग्य ही माना जायेगा कि यह सब जानते हुए भी अधिक माँस व अधिक दूध के लोभ में विदेशी नस्ल की गायों को भारत में प्रोत्साहित किया जा रहा है और देसी गायों की नस्ल को बूचड़खानों में खत्म कराया जा रहा है। देसी गायों की लगभग दो दर्जन नस्लें तो पूरी

भेजने की प्रार्थना की थी जो बलिया भागलपुर क्षेत्र में उपलब्ध हैं और गुणवत्ता में जिनका दूध अव्वल माना जाता है। चूंकि यह नस्ल विलुप्त प्राय है इसलिए पांच हजार के स्थान पर पांच सौ गायें ही नाइजीरिया भेजी जा सकी थीं। इसी प्रकार 1851-1960 की अवधि में भारत से आयातित सौराष्ट्र की गीर नस्ल की गायें ब्राजील और मैक्सिकों में सफल प्रदर्शन कर रही हैं। 1992 में विश्व की सर्वश्रेष्ठ दूध -उत्पादक गाय का पुरस्कार जिस गाय को मिला था वह गीर नस्ल की रूपाली थी। इसी रूपाली की कोख से जन्म लेने वाले जसदण सांड को विश्व का सर्वश्रेष्ठ प्रजनक होने का गौरव प्राप्त रहा है। वर्तमान में ब्राजील में 60 लाख गायें गीर नस्ल की हैं। लगभग यही स्थिति मैक्सिकों में है। 2004 में गीर नस्ल की एक गाय तीन लाख छत्तीस हजार रुपये में बिकी थी।

यदि केवल देसी गाय के गोबर का ही सही इस्तेमाल किया जाये तो गाय भले ही दूध न दे, तो भी यह अपनी उपयोगिता के कारण राष्ट्रीय पशु अर्थात् अवध्य प्राणी कहलाने के योग्य है।

गोबर का इस्तेमाल सदियों से खाद और ईंधन के रूप में होता है लेकिन कृषि वैज्ञानिकों द्वारा विकसित तकनीक से कम गोबर से अधिक लाभ लेना अब सम्भव हो चुका है। पैंतीस हजार गाय बैल के गोबर मूत्र से एक लाख तीस हजार टन वर्मी-कम्पोस्ट खाद और सत्तर जार लीटर जैव पैस्टिसाइड प्रतिदिन तैयार किया जा सकता है। एक गाय के साल भर के गोबर से लगभग 80 टन खाद एक वर्ष में तैयार हो सकती है।

केंचुआ अर्थात् जैविक खाद, नडेप, सेन्द्रिय कम्पोस्ट खाद

सरकार पर इतना भारी दबाव रहता है कि सब कुछ जानते हुए भी वह अंधी बनी बैठी है और भारत को विश्व की प्रथम दर्जे की मांस मण्डी बनाने को तत्पर है। लार्ड क्लाइव के समय में स्थापित एक बूचड़खाने की संख्या जो 1947 तक केवल 300-400 बूचड़खानें तक ही पहुंच पाई थी वह आजाद भारत में 4000 तक पहुंच गई है। इसमें अवैध बूचड़खानों की गिनती भी कर ली जाये तो यह संख्या लगभग 2 लाख तक पहुंच जायेगी। संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन (यू.एन.एफ.ए.ओ.) के आंकड़ों के अनुसार 1980 में भारत का छह करोड़ सत्तर लाख पशु धन इन बूचड़खानों में काटा गया था जिनमें गोवंश की संख्या थी एक करोड़ पैंसठ लाख। सन् 2008 में दस करोड़ बीस लाख पशु काटे गये जिनमें गोवंश की संख्या थी दो करोड़ तैंतालीस लाख। मांस उत्पादन में भारत का विश्व में आठवां स्थान है। पश्चिम बंगाल, केरल और पूर्वोत्तर के कुछ प्रान्तों को छोड़कर समस्त देश में यद्यपि गोहत्या पर प्रतिबन्ध है लेकिन गैर कानूनी रूप से गो-हत्या हर प्रान्त में अपने चरम पर है और अपराधियों की पुलिस व प्रशासन से सांठगांठ होने के कारण यह अवैध व्यापार चल रहा है। पीपुल फॉर एनिमल हरियाणा के चेयरमैन नरेश कादियान लगभग 450 एफ.आई.आर. देश के विभिन्न राज्यों में गो-तत्करों के खिलाफ दर्ज करा चुके हैं लेकिन परिणाम शून्य है।

गोबर की उपयोगिता को अब बखूबी समझा जाने लगा है। हरियाणा में ऑपशन एनर्जी इण्डिया प्रा. लि. अमेरीका की मदद से हॉसी की गोशाला में एक आधुनिक गोबर गैस प्लांट (इंडयूज ब्लैंकेट रिएक्टर) लगा रही है जिस पर 183.43 लाख रुपये की लागत आयेगी। परम्परागत बायोगैस प्लांटों की 30 दिनों की गोबर सार प्रतिधारणा की तुलना में यह आधुनिकतम प्लांट केवल पांच दिनों में इस क्रिया को सम्पन्न कर सकेगा। यह प्रतिदिन एक हजार क्यूबिक मीटर गोबर गैस तथा लगभग 4 टन गोबर खाद उत्पादित करेगा। उत्पादित बायोगोबर गैस का 96 प्रतिशत मिथेन गैस में शोषित किया जायेगा जिसमें से 200 क्यूबिक मीटर का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए तथा शेष बायो सी. एन. जी. सिलेण्डरों में भरा जायेगा जिसे 25 रुपये प्रति किलो की दर

अगले पृष्ठ पर जारी है

पिछले पृष्ठ का शेष

# हम गोहंता नहीं, गो रक्षक बनें

से उद्यमियों को बेचा जायेगा। गोबर खाद की बिक्री 2.50 रुपये प्रतिकिलो की दर से की जायेगी। गोबर गैस से उत्सर्जित कार्बन डाई-ऑक्साइड को भी सिलेण्डरों में भर कर औद्योगिक इकाइयों को बेचा जायेगा। गऊशाला को न केवल उसके खरीदे गये गोबर की कीमत दी जायेगी बल्कि बायो सी. एन. जी. की बिक्री से प्राप्त आय का 10 प्रतिशत भाग भी लाभांश के रूप में उसे मिलेगा। इसी प्रकार 145 लाख रुपये की लागत से 100 क्यूबिक मीटर बायोगैस उर्वरक प्लांट सोनीपत जिले में स्थापित करने की स्वीकृति केन्द्रीय मंत्रालय ने हरियाणा सरकार को दी है जिसमें दोनों की आधी-आधी पूंजी लगेगी। कानपुर की भौति गोशाला, जयपुर का गो-सेवा केन्द्र और नागपुर का गो-विज्ञान अनुसंधान केन्द्र आदि अनेक संस्थान गोबर और गोमूत्र की उपयोगिता सिद्ध करने में वर्षों से लगे हुए हैं। इसी का परिणाम है कि गाय को केवल दूध तथा बैल को भार ढोने वाला पशु मानने की सोच अब बदलने लगी है। इन संस्थाओं ने अब कुछ ऐसे गोबर व गोमूत्र से तैयार उत्पाद बनाये हैं जिनके बारे में कल्पना भी नहीं की जा सकती थी जैसे मच्छर क्वायल, अगरबत्ती, डिस्टैम्पर, स्नान का साबुन, दन्त मंजन, गमले, कागज, कपड़ा, बैलचालित ट्रैक्टर, विद्युत जनित्र, जल अग्नि ध्वनि तथा रेडियेशन निरोधी टाइल्स तथा शंखपुष्पी, तुलसी, ब्राह्मी तथा गोमूत्र से तैयार गोपेय कोला नामक शीतल पेय। अब एक ऐसा यन्त्र तैयार किया जा रहा है जिससे एक बोतल गोमूत्र से एक घर को 6-7 दिन तक प्रकाशित रखा जा सकेगा। जयपुर के गो सेवा केन्द्र में बैलों की सहायता से विद्युत उत्पादन हो रहा है जिसका उपयोग बल्ब और पंखे चलाने में होता है। यदि इन सबको व्यापक स्तर पर विकसित किया जाये तो न केवल प्रतिवर्ष अरबों रुपयों की विदेशी मुद्रा कमाई जा

मांस से केवल 2.6 अरब लोगों को मांसाहार मिलेगा जबकि इतने अनाज से 6 अरब शाकाहारियों की भूख मिटाई जा सकती है। सारी दुनिया की कुल आबादी 7 अरब के लगभग है। जाहिर है कि मांसाहार प्रतिबंधित होने से इतना अनाज बचेगा कि कोई भूख से नहीं मरेगा। आयरलैण्ड की पूर्व राष्ट्रपति, मानवाधिकार आयोग की पूर्व उच्चायुक्त मेरी रोबंसन द्वारा कराये गये सर्वेक्षण के अनुसार दुनिया के किसी न किसी हिस्से में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष भूख के कारण हर सात सैकेण्ड के बाद 10 साल से कम उम्र का एक बच्चा मौत का शिकार बनता है। मांसाहार छोड़ने पर यह स्थिति न रहेगी।

पशु-हत्या और मांसाहार को प्रतिबंधित करने से पूरे विश्व में न केवल हरित क्रान्ति और श्वेत क्रान्ति का सूत्रपात होगा बल्कि औद्योगिक क्रान्ति और आर्थिक क्रान्ति का पथ भी सुगमता से प्रशस्त होगा। गत शताब्दियों में भले ही शाकाहार को धार्मिक और भौतिक आधार पर मान्यता मिलती रही हो लेकिन अब विशुद्ध आर्थिक आधार पर, चिकित्सा विज्ञान के आधार पर, पर्यावरण शुद्धि के आधार पर, भूख निवारण के आधार पर, समाज शास्त्र के आधार पर पशु हत्या और मांसाहार की सर्वत्र भर्त्सना हो रही है। लेकिन हर देश की सरकार बूचड़खानों से जुड़े तंत्र के दबाव में रह कर तात्कालिक लाभ का लोभ संवरण नहीं कर पा रही है और पशु रक्षा के दूरगामी लाभों को नजरअंदाज करने की अभ्यस्त बनी हुई है।

पशु हत्या की तुलना में पशु रक्षा के लाभ अधिक हैं अत: किसी भी राष्ट्र के संदर्भ में पशु-हत्या का सीधा-सा

पशु-पालन एक भारतीय किसान का पुश्तैनी व सहायक व्यवसाय था। जिन ग्रामीणों के पास एक बीघा जमीन भी नहीं थी वे भी पशु-पालन कर अपनी बेहतर जिन्दगी जी रहे थे। सुविधा भोगी होने से किसानों ने पशु पालन में कम रुचि लेनी शुरू कर दी। इसी का परिणाम है कि अब गांव में ही किसी भी कीमत पर उन्हें शुद्ध दूध या शुद्ध घी नहीं मिल पाता। अपनी गलत सोच को बदलकर ही किसान अपने जीवन को स्वस्थ एवं समृद्ध बना सकते हैं। पशु पालन से हाथ खींचने का घातक परिणाम यह निकला है कि उन्हें गोबर व खाद से वंचित होना पड़ा है और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता से जमीन की उत्पादन क्षमता निरन्तर कम होती गई है। ये जमीनें जहां बंजर होती जा रही है वहां जमीनी जल तक विषैला होता जा रहा है। रासायनिक उर्वरकों का प्रचलन बढ़ने से न केवल किसान की

www.thearyasamaj.org

**पशु-हत्या और मांसाहार को प्रतिबंधित करने से पूरे विश्व में न केवल हरित क्रान्ति और श्वेत क्रान्ति का सूत्रपात होगा बल्कि औद्योगिक क्रान्ति और आर्थिक क्रान्ति का पथ भी सुगमता से प्रशस्त होगा। गत शताब्दियों में भले ही शाकाहार को धार्मिक और भौतिक आधार पर मान्यता मिलती रही हो लेकिन अब विशुद्ध आर्थिक आधार पर, चिकित्सा विज्ञान के आधार पर, पर्यावरण शुद्धि के आधार पर, भूख निवारण के आधार पर, समाज शास्त्र के आधार पर पशु हत्या और मांसाहार की सर्वत्र भर्त्सना हो रही है। लेकिन हर देश की सरकार बूचड़खानों से जुड़े तंत्र के दबाव में रह कर तात्कालिक लाभ का लोभ संवरण नहीं कर पा रही है और पशु रक्षा के दूरगामी लाभों को नजरअंदाज करने की अभ्यस्त बनी हुई है।**

सकती है बल्कि रासायनिक उर्वरकों, कीट व खरपतवार-नाशकों, डीजल पेट्रोल, रसोई गैस, सी. एन. जी., वाहन ईंधन, विद्युत, कोका-कोला, पैप्सी, कोला, कागज, कपड़ा तैयार करने वाले भारी उद्योग तैयार हो सकते हैं। इससे गाँवों की शहरों पर निर्भरता लगभग खत्म हो जायेगी और वे रसोई गैस, खाद, ईंधन, बिजली आदि के मामलों में आत्म निर्भर हो जायेंगे। यदि देश को केवल रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों से छुटकारा मिल जाये तो कैंसर, दमा, किडनी फैल्योर, पीलिया, तपेदिक, हृदय रोग, मधुमेह, कुपोषण आदि के रोगियों की संख्या घट कर एक चौथाई रह जायेगी और एलोपैथिक औषधियों पर प्रतिवर्ष खर्च होने वाली अरबों रुपये की विदेशी मुद्रा बचाई जा सकेगी। इसके अतिरिक्त जल और वायु प्रदूषण की समस्या से भी निपटा जा सकेगा जो रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों के कारण निरन्तर बढ़ रही है। इनकी वजह से भूमि जहरीली और बंजर बनती जा रही है, उत्पादन निरन्तर घट रहा है, जल स्तर सौ फीट नीचे चला गया है, जल प्रदूषित हो गया है, अन्न, दूध, फल, सब्जी, सब विषैला हो चुका है। यहाँ तक कि पंजाब, हरियाणा, पश्चिम उत्तर प्रदेश की माताओं का दूध तक जहरीला बन चुका है। इसका ठोस विकल्प जैविक खेती ही हो सकती है जिसमें गोवंश निर्णायक भूमिका निभा सकता है। गोवंश पर आधारित अर्थशास्त्र पर अब विदेश में भी गम्भीर चिन्तन होने लगा है जिसके आधार पर बताया जा रहा है कि विश्व में बढ़ती भुखमरी का उपचार मांसाहार से नहीं शाकाहार से होगा। ब्राउन यूनिवर्सिटी के वर्ल्ड हंगर प्रोग्राम के अन्तर्गत अनुमान लगाया गया है कि मांस उत्पादन के लिए जितना अनाज दुनिया के मांस उत्पादक पशुओं को खिला कर मांस तैयार किया जाता है उस

किसी भी राष्ट्र के संदर्भ में पशु-हत्या का सीधा-सा अर्थ है राष्ट्र हत्या। पशु हत्या से केवल पशु की हत्या नहीं होती बल्कि देश के कृषि तंत्र की हत्या होती है, जमीन की उत्पादन क्षमता की हत्या होती है, कृषि आधारित रोजगारों की हत्या होती है, देश के आर्थिक ढांचे की हत्या होती है, कुपोषण और भूख के शिकार लोगों की हत्या होती है। किसी भी कृषि उत्पाद की कमी या अभाव में मांग बढ़ने से मिलावट और मंहगाई साथ-साथ बढ़ती है। इस स्थिति में पशु-हत्या और मांसाहार के बढ़ते प्रचलन को रोकना व खत्म करना देश के हर नागरिक का प्रथम कर्तव्य बनता है। औद्योगिक क्रांति केवल सुविधा या धन जुटा सकती है, पेट भरने के लिए, पोषण के लिए, जीवित रहने के लिए अन्न, गन्ना, चावल, दाल, फल, सब्जी, दूध, घी, मक्खन तो हरित व श्वेत क्रान्ति आने से ही मिल सकेंगे। ये सब खेत से मिलेंगे, फैक्ट्री कारखाने से नहीं अतः कृषि के विकास को ही प्राथमिकता देनी होगी। भूखे पेट को भरपेट रोटी न मिलेगी तो वह बगावत पर उतरेगा या आपराधिक दुनिया में कदम रखने को विवश होगा। औद्योगिक विकास से देश की पूंजी कुछ घरानों तक ही सिमटती जा रही है, आम जनता में उस पूंजी का चलन न होने से न केवल औद्योगिक जगत् में अशांति फैल रही है बल्कि समाज के अन्य भागों में भी विद्रोह के शोले सुलग रहे हैं। यह स्थिति राष्ट्र के समग्र विकास में साधक नहीं बाधक है। अतः औद्योगिक क्रान्ति और कृषि क्रान्ति दोनों पर समान ध्यान देने की आवश्यकता है। कृषि क्रान्ति बिना पशु रक्षा के सम्भव नहीं है। ट्रैक्टर से खेत तो जोता जा सकता है लेकिन दूध नहीं निकाला जा सकता, न उससे गोबर व खाद की प्राप्ति सम्भव है, न एक ट्रैक्टर से दूसरा ट्रैक्टर पैदा हो सकता है। एक गाय अपने जीवन में आठ दस बार से अधिक ब्याती है जिससे किसान की आर्थिक स्थिति सुधरती है। ट्रैक्टर का प्रचलन बढ़ने से बैल की उपयोगिता खत्म सी हो गई है। लेकिन आज भी देश के अनेक क्षेत्र ऐसे हैं जहां ट्रैक्टर नहीं बैल ही सफल हैं। कृषि अनुसंधान में लगे तकनीशियन ऐसे-ऐसे नये काम खोज रहे हैं जिसमें बैलों की जरूरत होगी। बैल की उपयोगिता बढ़ने से गो रक्षा के नये आयाम खुलेंगे लेकिन देश की ट्रैक्टर लॉबी को यह सब रास नहीं आ रहा है। जापान के किसानों का ट्रैक्टरों से मोह भंग हो रहा है और वे पुनः बैल चालित हल की ओर लौट रहे हैं क्योंकि ट्रैक्टर जहां किसान पर अतिरिक्त बोझ सिद्ध हो रहा है वहाँ पुराना हल उसे राहत पहुँचा रहा है। विशेष कर छोटी जोत के किसान को ट्रैक्टर मंहगा पड़ रहा है। ट्रैक्टर लॉबी का प्रचार और विज्ञापन अधिक होने से तथा बैंकों द्वारा लोन सुविधा देने से भारतीय किसान की सोच बदली थी लेकिन नई-नई तकनीक आने से ट्रैक्टर का स्थान बैल लेगा, वे दिन शीघ्र लौटने वाले हैं।

रासायनिक उर्वरकों का प्रचलन बढ़ने से न केवल किसान की जमीन बल्कि खुद किसान भी अनेक भयंकर रोगों की चपेट में आता जा रहा है। इस सम्पूर्ण कृषि ढांचे को जैविक खेती का शुभारम्भ करके ही बदला जा सकता है। इससे खेत व किसान ही नहीं बचेंगे, देश का पशु धन भी बचेगा। किसान परिवार कम से कम एक देसी गाय पालने का दृढ़ संकल्प लें तो जैविक खेती की सफलता को कौन रोक सकता है। भारतीय किसान को अपनी सोच बदलनी होगी तभी हरित व श्वेत क्रान्ति की बेहतर सम्भावनाएँ इस देश में बन सकेंगी।

लेकिन यह देश मूर्खों का देश है जहां एक काला हिरण मारने पर तो सुप्रसिद्ध क्रिकेटर नवाब पटौदी और सिने कलाकार सलमान खान को जेल जाने से बचने के लिए वर्षों अदालत की खाक छाननी पड़ती है लेकिन एक गोहत्यारे को यहां कोई सजा नहीं मिलती। सम्पन्न घराने कुत्ते और बिल्ली पालने का शौक तो रखते हैं लेकिन गाय पालना मुसीबत समझते हैं। इस सोच को बदले बिना पशु रक्षा कैसे हो सकती है?उन सरकारों को क्या कहा जाये जो देश की शराब लॉबी और मांस लॉबी की तिजौरिया भरने के लिए देशभर में मुर्गी पालन, मछली पालन, सुअर पालन, खरगोश पालन की सैकड़ो योजनाएं चला रही हैं लेकिन गोपालन, गोरक्षण, गोसंवर्द्धन के लिए कुछ भी करने को तैयार नहीं है। किसान और सरकार जब तक अपनी सोच नहीं बदलेंगे तब तक इस देश में कुछ भी बेहतर होने वाला नहीं है। अपने देश की परम्परा को भुलाकर, अपने पुरखों की राह बदलकर हम अपने कृषि तन्त्र को पश्चिमी ढांचे में ढालते जा रहे हैं। दुःख तो इस बात का है कि पश्चिम अपनी गलतियों का खामियाजा भुगत कर पूर्व की प्राचीन परम्परा को अपनाने लगा है लेकिन हम अब भी उन्हीं की गलत व घातक रिवायतों में विकास और समृद्धि ढूंढ़ रहे हैं। रासायनिक उर्वरक, पशु हत्या, मछली, मुर्गी व सूअर पालन, विदेशी नस्ल की गायों का पालन अथवा मांसाहार भारतीय कृषि की नींव को खोखला कर रहे हैं अतः इनसे छुटकारा पाकर ही भारतीय कृषि विकास पथ पर अग्रसर हो सकती है। इनके प्रचलन को बनाये रखने में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से जो भी सहायक है वह भारतीय कृषि का विनाशक है। किसान और गोशालाएं तो गायों का पालन पोषण करें और उन गायों को किसी न किसी बहाने बूचड़खानों में जाकर कटा दिया जाये – यह खेल अब अधिक दिन चलने वाला नहीं है।

भारतीय परम्परा में भले ही कुछ अंधकार युग ऐसे रहे हों जिनमें मांसभक्षण और पशु बलि को समर्थन प्राप्त रहा हो लेकिन अधिकांशतः भारतीय परम्परा में अहिंसा व्रत का पालन होता रहा है। पतन के दौर का स्मरण कर हम मांसाहर या पशु-हत्या का समर्थन नहीं कर सकते। महाराज मनु (मनु स्मृति 2.45) भारत की विकसित और समृद्ध परम्परा का अनुसरण करते हुए ही लिखते हैं शेष पृष्ठ 10 पर

# हम गोहंता नहीं, गो रक्षक बनें

कि पशु को मारने की अनुमति देने, उसका अंग काटने, मारने, खरीदने, बेचने पकाने, परोसने और खाने वाले आठों ही घातक तथा बराबर के दोषी व दण्डनीय है।'' आधुनिक चिकित्सा विज्ञान और अर्थशास्त्र दोनों ने ही मांसाहार को पूरी तरह नकार दिया है अतः मनु महाराज के आदेश को आगे बढ़ाते हुए हम नौवा दण्डनीय अपराधी उन लोगों को मानते हैं जो देश में बढ़ती पशु-हत्या और मांसाहार को देखते हुए चुप हैं, निष्क्रिय हैं, विरोध में जो एक कदम उठाने को तैयार नहीं है। शास्त्रों में गोहत्यारे के लिए मृत्युदण्ड का प्रावधान है। बहादुरशाह जफर और महाराज रणजीत सिंह ने भी अपने शासनकाल में इस दण्ड व्यवस्था को अपनाया था। गोहत्या का विरोध आज धार्मिक आस्था के आधार पर नहीं विशुद्ध अर्थशास्त्र के आधार पर भी हो रहा है। गाय ही नहीं अन्य पशु भेड़ बकरी, घोड़ा, ऊँट आदि भी भारतीय कृषि व ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अंग हैं। अतः ये सभी प्राणी अबध्य माने जाने चाहिए।

यह सिद्ध हो चुका है कि जीव हत्या के कारण मारे जा रहे प्राणियों के चीत्कार, पीड़ा और वेदना की तरंगे वातावरण में फैलती है और हजारों वर्षों तक उनका अस्तित्व बना रहता है जिससे प्राकृतिक संतुलन बिगड़ता है, भू चुम्बकीय क्षेत्र प्रभावित होता है और परिणामतः भूकम्प, समुद्री तूफान, आंधियाँ, अनावृष्टि, अतिवृष्टि की स्थिति बनती है और जन सामान्य में हिंसक वृत्ति, आपराधिक मानसिकता तथा विकृतियाँ पैदा होती है।

गाय चूंकि भारतीय किसान के लिए सर्वाधिक उपयोगी प्राणी है अतः उसे राष्ट्रीय पशु का दर्जा देकर उसकी संरक्षा, संवर्द्धन, पालन पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया जाना आवश्यक है। इस मांग को लेकर जो भी संत, संस्था, सम्प्रदाय अथवा साधरण नागरिक सक्रिय होकर मैदान में नहीं उतरता उसे गोरक्षक नहीं गोहंता ही मानना होगा। सन् 1966 के गोरक्षा सत्याग्रह के पश्चात् कोई गम्भीर प्रयास गोरक्षा के निमित्त नहीं कितने ही प्रदर्शन गोरक्षा को लेकर क्यों न हुए हों। देश में एक दो नहीं हजारों संस्थाएं हैं जो गाय के नाम पर अपनी रोजी रोटी कमा रही हैं लेकिन गोरक्षा के निमित्त कतई लापरवाह एवं निष्क्रिय हैं। इस भारत में भूल-चूक से ही यदि किसी हिन्दू के हाथ से गोहत्या हो जाती थी तो वह स्वेच्छा से प्रायश्चित स्वरूप गांव-गांव पद यात्रा व भिक्षाटन करते हुए गंगा स्नान करने जाता था। आज देश में करोड़ों की संख्या में गोवंश कट रहा है, प्रतिवर्ष लाखों कांवड़िये पद यात्रा कर गंगा स्नान को जाते हैं लेकिन विशाल पैमाने पर हो रही गोहत्या को लेकर प्रायश्चित का कोई भाव उनके भीतर नहीं होता। अपने को गोहत्या का नौंवा अपराधी मानकर ये कांवड़िये इस बढ़ते पाखण्ड को गो-रक्षा आन्दोलन में यदि बदल दें तो इस देश का कायाकल्प होने में किसी प्रकार का विलम्ब न होगा। सरकार क्या इस दुनिया को भी झुकना पड़ता है बशर्ते उसे झुकाने वाले दीदावर पैदा हो जायें।

इस असम्भव कार्य को सम्भव कर दिखाने की क्षमता अकेले हिन्दू जनमानस में है लेकिन एक तो उसके भीतर का आर्यत्व जाग्रत नहीं प्रसुप्त है तथा दूसरे वह अनेक सम्प्रदायों, पंथों, संस्थाओं में विभाजित है। दलगत राजनीति ने तो उसे विभाजित कर ही रखा है इसके साथ-साथ सामाजिक स्तर पर भी वह सवर्ण, दलित, अल्प संख्यक आदि के रूप में बंटा हुआ है। इस स्थिति से उबरते हुए यदि पारस्परिक प्रतिस्पर्द्धा, अहं और अपनी-अपनी रणनीति का परित्याग कर समूचा हिन्दू जनमानस एक मंच पर संगठित होकर गोरक्षा के संघर्ष को शुद्ध, नैतिक व आर्थिक आधार पर खड़े होकर शुरू करें और किसी भी प्रकार की दलगत राजनीति की दल-दल से मुक्त होकर इस अभियान को अपना समर्थन दे तो 7 नवम्बर, 1966 को संसद के समक्ष बलिदान देने वाले 700 गोभक्तों को सच्ची श्रद्धांजलि देकर सम्पूर्ण गोहत्या बन्दी के उनके स्वप्नों को साकार कर सकता है। राष्ट्रमण्डल खेलों में गोमांस परोसने के भारत सरकार समिति तथा अन्य संगठनों ने दिल्ली की मुख्यमंत्री और महामहिम राष्ट्रपति आदि को अपना ज्ञापन देकर तथा गृहमंत्री व प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर इस कदम को पीछे हटाने का आग्रह किया तो उसे विवशतः मांस परोसने का अपना निर्णय वापस लेना पड़ा। यह सफलता इस विश्वास को जगाती है कि एक मंच पर एकत्र होकर यदि समूचा हिन्दू जनमानस समर्पित भावना से गोरक्षा को लेकर उठ खड़ा हो तो समूचे भारत में गोहत्या पर कानूनी प्रतिबन्ध लग सकता है, गाय की पड़ोसी देशों को तस्करी रुक सकती है, रेल, ट्रक, जहाज से गाय अथवा गोमांस का देश-विदेश में लदान बन्द हो सकता है। भारत सरकार से हमारी मांग ये होनी चाहिए कि -

1. गाय को राष्ट्रीय और अवध्य पशु घोषित किया जाये।
2. गोहत्यारे को आजीवन कारावास का दण्ड मिले।
3. जिन बूचड़खानों में गोवंश कटे उनका रजिस्ट्रेशन तुरंत निरस्त कर उन्हें स्थाई रूप से बन्द कर दिया जाये।
4. रेल, ट्रक या हवाई जहाज से गोवंश और गोमांस का लदान बन्द हो और उसकी तस्करी रोकने के पुख्ता इंतजाम हों।
5. केन्द्र में गो-मंत्रालय और हर प्रान्त में गो-सेवा आयोग अनिवार्यतः स्थापित हो।
6. गाय की भारतीय नस्लों के संरक्षण, संवर्धन और पालन पर विशेष ध्यान दिया जायें तथा विदेशी नस्ल के गोवंश का लोभ संवरण किया जाये।
7. जैविक कृषि को प्रतिष्ठित एवं प्रोत्साहित करते हुए रासायनिक उर्वरकों, रासायनिक कीट नाशकों व रासायनिक खरपतवार नाशकों को अंतिम रूप से नकारते हुए तत्काल प्रतिबंधित किया जाये।
8. ऑक्सीटोसिन के इंजैक्शन की बिक्री नियंत्रित हो और पशुओं तथा फल-सब्जियों पर इसका दुरुपयोग दण्डनीय करार दिया जाये।

www.thearyasamaj.org



ఆర్య జీవన్
హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక
ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆంధ్రప్రదేశ్, 4 - 2 - 15
మహర్షి దయానంద మార్గము
సుల్తాన్ బజార్, హైదరాబాద్ - 500 095
ఫోన్ : 040 - 24753827, 66758707, ఫ్యాక్స్:24557946
సంపాదకులు - విఠల్‌రావు ఆర్య, ప్రధాన్ సభ

# दक्षिण अफ्रिका डर्बन का आर्य महा सम्मेलन

सम्मेलन का आयोजन करेंगे। दक्षिण अफ्रिका आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष श्री बिसराम रामविलासजी तथा उनके साथियों ने सार्वदेशिक सभा के दोनों गुटों के अधिकारियों व उनके साथियों को सम्मेलन में भाग लेने हेतु आमंत्रित किया। दोनों गुटों के प्रमुख अधिकारी अर्थात् माननीय स्वामी अग्निवेशजी, आचार्य बलदेवजी, स्वामी आर्यवेशजी, प्रो. विट्ठलरावजी आर्य (हैदराबाद), श्री प्रकाशजी आर्य, श्री विनयजी आर्य दिल्ली, श्री राजसिंहजी आर्य, श्री मायाप्रकाशजी त्यागी, स्वामी श्रद्धानंदजी तथा अन्य गणमान्य लोगों के साथ-साथ लगभग सौ-एक आदमी भारत से सम्मेलन में उपस्थित थे। सम्मेलन का आयोजन भारत की तुलना मे बहुत बढ़िया ढंग से किया गया था। व्यवस्थाओं में कोई कमी नहीं थी' कार्यक्रमों का आयोजन भी बहति ही अनुशासित ढंग से किया गया था। भारत के हम (दोनों गुटों) के लोग एक ही विमान से डरबन पहुँचे। हमारे स्वागतार्थ श्री रामविलासजी के

साथ-साथ श्री राजेश लक्ष्मणजी, जो आर्यन बेनोवेलेन्ट होम के डाइरेक्टर हैं तथा श्री राम क्लासजी आदि गणमान्य लोग उपस्थित थे। भारत में चाहे वो भारतीय हो या भारत के बाहर के लोग हो, उनके लिए अव्यवस्था बहुत रहती है। पर दक्षिण अफ्रिका में यह नाममात्र को भी देखने को नहीं मिला। कान्फरेंस का आयोजन डरबन सिटी हॉल में बहुत ही बढ़िया ढंग से किया गया था। भारत के सम्मेलनों में एक तरफा धुआंधार भाषण ही हुआ करते हैं और वक्ताओं में विषय पर कोई सामंजस्य नहीं होता। लेकिन दक्षिण अफ्रिका के महानुभावों ने अपने अनुभव की कमी के बावजूद बहुत ही व्यवस्थित ढंग से और नियमित रूप से सम्मेलन में विषयों का आयोजन किया। यह ठीक है कि वह सम्मेलन आर्य समाज द्वारा आयोजित था पर मुख्य रूप से वहाँ पर रह रहे सारे हिंदुओं को ध्यान में रखकर आयोजित किया गया था। न केवल दक्षिण अफ्रिका बल्कि विदेशों में रह रहे सारे भारतीयों को ध्यान में रखकर, उनकी समस्याओं, उनकी कठिनाइयों को ध्यान में रखकर आयोजित किया गया था। इसीलिए विषय के अनुसार कई एक कार्यक्रमों से भारतीय सहमत न होते हुए भी सम्मेलन में भाग लिया और वहाँ के लोगों का उत्साह वर्द्धन किया। विशेष बात यह रही कि भारत के आर्य समाजियों में यहाँ भारत में जो गुटबाज़ी देखने को मिलती है, वहाँ यही लोग बड़े सभ्य ढंग से मिलजुल कर साथ-साथ चल रहे थे। सम्मेलन का उद्घाटन भी सार्वदेशिक सभा के दोनों गुटों के प्रधानों से डरबन मुन्सिपल कार्पोरेशन के चेयरमैन की उपस्थिति में करवाया गया। अर्थात स्वामी अग्निवेशजी व आचार्य बलदेवजी ने संयुक्त रूप से सम्मेलन का उद्घाटन किया। सम्मेलन से संबंधित अन्य बातों का ज़िक्र अगले अंक में किया जाएगा, पर एक बात यहां विशेष रूप से कहना चाहूँगा कि भारत में शराब के खिलाफ, नशाखोरी के खिलाफ या फिर औरतों के प्रति हो रहे अन्याय और अत्याचारों के खिलाफ आदि, झंडा उठाकर चलने में कई एक आर्य समाजी, जिनमें गणमान्य लोग भी शामिल हैं, नाक-भौं सिकुड़ते हैं। उन्हें ऐसे सामाजिक कार्यक्रम या वर्तमान समाज में उत्पन्न हो रही समस्याओं से जूझने में न कोई रुचि होती है न रास ही आता है। पर वहाँ दक्षिण अफ्रिका के फिनिक्स शहर में आयोजित

**'abuse against women and children, against rape, against drugs and alcohol'**

के मार्च में सभी प्रमुख लोग झंडा उठाए नारे लगाते हुए चल रहे थे। अगर यह काम भारत में सभी लोग मिलकर समय-समय पर विभिन्न समस्याओं के प्रति जागरूकता के लिए झंडा उठाकर चलना सीख लिया तो आर्य समाज देश में एक ताकतवर संस्था के रूप में, आंदोलन के रूप में उभर सकती है।

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUEMAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR



कलांजली प्रेस विठ्ठलवाडी में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया। प्रकाशकः आर्य प्रतिनिधि सभा आं.प्र.सु.बाज़ार,हैदराबाद